करो या मरो

१९४२ की खुली बगावत की उज्ज्वल झांकी उपस्थित कर
महाविद्रोह की धधकती चिनगारी को प्रज्वलित
रखने वाले महामन्त्र की अमर कहानी

लेखक
श्री सत्यदेव विद्यालंकार
सरदार रामसिंह रावत
श्री पी० सोमसुन्दरम

मूल्य सवा रुपया
२६ जनवरी, १९४७
(स्वतन्त्रता दिवस)

मा र वा ड़ी प ब्लि के श न्स
४० ए, हनुमान रोड, नई दिल्ली.

विक्रेता:—
मारवाड़ी पब्लिकेशन्स
४० ए, हनुमान रोड,
नई दिल्ली.

मूल्य— सवा रुपया
आजादी दिवस १९४७

प्रकाशक:—
श्री शारदा मन्दिर दिल्ली

मुद्रक:—
इन्द्रप्रस्थ प्रिंटिंग प्रेस, देहली

"करो या मरो" की साधना में
अमरपद को प्राप्त करनेवाले
अगस्त १९४२ के वीर
शहीदों की पुनीत
स्मृति में

कोई राष्ट्र तभी जीवित रह सकता है, जब कि उसके निवासी मृत्यु का आह्वान कर उसका आलिंगन करने को तैयार रहते हैं। हमारा यह अटल प्रण है कि हम करेंगे या मरेंगे।

—महात्मा गांधी।

DO OR DIE

DO AND DIE

'मैं आज भी लड़ाई के मैदान में खड़ा हूं..................।'—नेहरूजी

लड़ाई के मैदान में ?

हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई, जितना मुमकिन है, उतनी तेजी से आज भी जारी है। लड़ाई का पैंतरा आज बदल सकता है और कल भी इसमें तबदीली हो सकती है। लेकिन, सच्चाई यह है कि हम आज भी बरतानवी साम्राज्यवाद के बरखिलाफ लड़ाई के मैदान में खड़े हुये हैं। आज यदि मैं भारत सरकार में शामिल हूँ, तो भी मैं उस लड़ाई में आज उतना ही शामिल हूँ, जितना कि मैं अपनी सारी जिन्दगी में उसमें लगा रहा हूँ।

अगर हम आज एशिया में चारों ओर नजर दौड़ायें, तो हमें काफी बड़े दायरे में लड़ाई जारी दीख पड़ती है। यहाँ हिन्दुस्तान में भी हमारे चारों ओर लड़ाई और संघर्ष की आग सुलग रही है; भले ही किसी बाहरी को वह इतनी साफ न दीख पड़ती हो। सच तो यह है कि जिस मुल्क की आजादी छीन ली जाती है, उसके सामने केवल दो राह रह जाती हैं। एक तो यह कि वह हकूमत करनेवाले की गुलामी अख्त्यार कर ले और दूसरा यह कि अपनी आजादी हासिल करने की जद्दो-जहद में, लड़ाई में, लगा रहे। इस लड़ाई के तरीके कई हो सकते हैं। लेकिन, लोगों के दिल और दिमाग में विद्रोह की भावना और बगावत का ख्याल हमेशा ही बनाये रखना चाहिये। लड़ाई का तरीका क्या हो, उसमें कौन-सा पैंतरा कब बदला जाय और कब किन हथियारों से काम लिया जाय,—इस सब का फैसला तो समय और उस समय के हालात को देखकर करना होता है। इसी से आज हिन्दुस्तान में एक अजीब-सा

मक्शा दीख पड़ता है। हममें से कुछ सरकार का साथ दे रहे हैं और हमारे कुछ साथी सूबों में वजारतें संभाले हुए हैं। फिर भी हम इंग्लैंड के बरखिलाफ उस लड़ाई में लगे हुए हैं, जिसका मकसद आजादी हासिल करना है और जिसको हमें तब तक जारी रखना है, जब तक कि हमारा यह मकसद पूरा नहीं हो जाता। मैं नहीं जानता कि अगले कुछ महीनों में क्या-होनेवाला है और मुल्क अपनी आजादी के दावे को मनवाने या आजादी को हासिल करने के लिये क्या करनेवाला है? लेकिन, यह साफ है कि यह लड़ाई केवल नारे लगाने, जलूस निकालने और ऐसे ही दूसरे कामों से कामयाब न होगी। इनकी कुछ कीमत हो सकती है; किन्तु लड़ाई में लगी हुई कौम केवल चिल्लाती या शोर नहीं मचाती। जब दो फौजें लड़ाई के मैदान में आमने-सामने खड़ी होती हैं, तब कई तरह के काम किये जाते हैं। फौज के अलावा आम लोगों का संगठन भी एक काम है। लोगों में जोर-जुल्म और ज्यादती को सहन करने से इन्कार करने की ताकत पैदा करना भी एक काम है। लेकिन, आखिरी पैंतरा तो कुछ और ही होगा। हम देख रहे हैं कि हमारे मुल्क में प्रतिगामी और प्रतिक्रियावादी लोग विदेशियों के साथ मिलकर हमारी आजादी की राह में रोड़े अटका रहे हैं। इस गुटबन्दी का खात्मा करना भी लड़ाई का ही एक हिस्सा है। नारे लगाने और शोर मचाने का समय गुजर गया। हम इस समय उस सङ्गठित फौज या कौम की तरह हैं, जो कामयाबी के किनारे पर पहुँची हुई है। इसलिए हमें सुसंगठित फौज या कौम की तरह ही काम करना चाहिये।

अगस्त १९४२ का नारा "करो या मरो" हमें आज भी याद रखना चाहिये। आजादी हासिल हो जाने के बाद उसको बनाये रखने के लिये भी हमें इस नारे को याद रखना ही होगा।—जयहिन्द।

१ जनवरी, १९४७
गांधी ग्राउण्ड (दिल्ली).

—जवाहरलाल नेहरू

एक नजर में

बोलते चित्र

सत्य' और 'अहिंसा' के पुजारी गान्धीजी का यह चरखा भी एक सुदर्शन-चक्र है। इसी में से अगस्त ४२ के महाविद्रोह का ज्वालामुखी फूट निकला था।

: १ :

विद्रोह की चिंगारी

१९२० में सुलगी हुई विद्रोह की चिंगारी के साथ जिस भारतीय तरुण ने आँखें खोली हैं और अपने अस्तित्व की कीमत को कुछ आँका है, उसने अपनी इन आँखों से भारतीय राजनीति और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के रङ्ग-मञ्च पर खेले गये कई नाटक देखे हैं। उनमें से सबसे बड़े नाटक का एक पटाक्षेप अभी पिछले ही वर्षों में हुआ है। कल तक भी जो दुनियां कितने ही छोटे-बड़े टुकड़ों में बटी हुई थी, वह आज एक विश्व-पञ्चायत के रूप में सङ्गठित होती जा रही है। दुनिया के भिन्न-भिन्न देशों की दूरी और उनको एक दूसरे से दूर रखने वाला अन्तर प्रायः मिटता-सा जा रहा है। महायुद्ध के विनाश का पहलू कितना भी भयानक क्यों न हो, और उसका अभिशाप कितना भी भीषण क्यों न न हो; किन्तु उसकी देन और उसका वरदान भी कुछ कम महत्व नहीं रखते। महायुद्ध के लिये किये गये वैज्ञानिक आविष्कारों ने ही तो दुनिया की दूरी और अन्तर को दूर करके सारे विश्वको एक संघ में परिणत करने का कुछ हलका-सा आभास उपस्थित कर दिया है। प्रलय उपस्थित कर देने वाली अणु-शक्ति और महाविनाश के साधन बने हुए राकेट को मिलाकर आज इस लोक के लोग चन्द्र-लोक में पहुँचने की योजनायें बना रहे हैं। आश्चर्य नहीं कि किसी दिन सारे ब्रह्मांड में आना-जाना शुरू हो जाय और आज का विश्व-संघ भावी ब्रह्मांड-संघ की भूमिका

बन जाय। लेकिन, इसमें तो आज भी कोई सन्देह नहीं कि एकदेशीय राजनीति अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के साथ इस प्रकार गुथ-सी गई है कि कोई भी देश दूसरों से अलग रह नहीं सकता और एक देश में घटने वाली घटनाओं का प्रभाव दूसरों पर पड़े बिना नहीं रहता। यही कारण है कि संसार के जिस बड़े नाटक के जिस अन्तिम दृश्य का अभी-अभी पटाक्षेप हुआ है, वह भारत के विद्रोही तरुण के लिये उपेक्षणीय नहीं है।

पूर्व में जापान और पश्चिम में जर्मनी का सैनिक राष्ट्र के रूप में जो विकास हुआ, वह विश्व के रङ्ग-मञ्च की अनोखी घटना थी। लेकिन, उनका पतन और विनाश उससे भी अधिक अनोखी घटना है। महायुद्ध के रङ्ग-मञ्च के प्रायः सभी महान अभिनेताओं का पराभव और पराजय भी कुछ कम विस्मयजनक नहीं है। जर्मनी के हर हिटलर, जापान के जनरल तोजो, इंग्लैण्ड के मियां चर्चिल और अमेरिका के राष्ट्रपति रूज़वेल्ट के भाग्य का सितारा अस्त हो चुका है। जर्मनी और जापान के पतन एवं विनाश के साथ-साथ दूसरों की पराधीनता पर फलने-फूलने वाले इग्लैण्ड के साम्राज्य का वर्चस्व भी प्रायः नष्ट हो रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय घटना-चक्र का केन्द्र-बिन्दु लन्दन न रहकर वाशिंगटन, न्यूयार्क अथवा सानफ्रांसिस्को आदि बनते जा रहे हैं। लेकिन, साम्राज्यवाद और पूंजीवाद का बोलबाला वैसा ही बना हुआ है। इंग्लैण्ड द्वारा पोषित इन दोनों दानवों का संरक्षण और पोषण अब अमेरिका करता दीख पड़ता है। इन दोनों का विनाश कर संसार को साम्यवाद के रंग में रंग देने की हामी भरने वाला जो सोवियट रूस दीनों, पतितों और पराधीनों के लिये आशा के रूप में प्रगट हुआ था, वह भी पूंजीपतियों और साम्राज्यवादियों के हमजोली का नाटक खेलता दीख पड़ता है। यही कारण है कि छोटे राष्ट्रों की स्वाधीनता के लिये आज वैसा ही सङ्कट उपस्थित है, जैसा कि इस महायुद्ध से पहिले अबीसीनिया, अलबानिया अथवा चीन आदि के लिये उपस्थित था। ईरान, इण्डोनेशिया

और वीतनाम में घटी घटनायें तथा चीन का गृह-युद्ध इसी संकट की ओर स्पष्ट निर्देष कर रहे हैं। इसी लिये "करो या मरो" का व्रत लेकर करवट बदलने वाले भारत के विद्रोही तरुण को आज भी १९२० के ही समान जागरूक बने रहना आवश्यक है।

विश्व के रंग-मंच के इस बड़े नाटक के अन्तिम दृश्य में आशाभरे जिस सुनहरे चित्र की झांकी दीख पड़ी है, वह है हिन्दुस्तान के नव-निर्माण की। निश्चय ही हिन्दुस्तान में सुलगी हुई विद्रोह की चिंगारी पिछली चौथाई सदी में अनेक बार प्रचण्ड रूप धारण कर इस समय कुछ सफलता के किनारे पहुंच सकी है। 'हिंसा' और 'अहिंसा' के विवाद का यह स्थान नहीं है। हिंसात्मक विद्रोह की साधना में लगे हुये विद्रोही युवकों के त्याग, बलिदान और उत्सर्ग की नींव पर ही अहिंसात्मक विद्रोह की इमारत खड़ी की जा सकी है। आज के राष्ट्रपति कृपलानी 'अहिंसात्मक विद्रोह' को अपनाकर भले ही अपने को अधिक निर्भीक, बलवान और दृढ़ अनुभव करते हों, किन्तु इस निर्भयता, शक्ति और दृढ़ता का आपके हृदय में बीजारोपण हिंसात्मक विद्रोह से ही तो हुआ है। आपके हृदय में देशभक्ति की अदम्य भावना उसी विद्रोह से पैदा हुई है। आपके समान कितने ही तरुणों ने अपने लाल रुधिर से हिंसात्मक विद्रोह की दीक्षा लेकर देशभक्ति के कांटों से भरे मार्ग पर नंगे पैरों चलना अङ्गीकार किया है। भारतीय विद्रोह को सफल बनाने में 'आजाद हिन्द' के नाम से यूरोप और पूर्वीय एशिया में स्वनामधन्य नेताजी श्री सुभाषचन्द्र बोस के जादूभरे नेतृत्व में हुई खूनी क्रांति का जो शानदार हिस्सा है, उससे कौन इनकार कर सकता है? इसीके साथ यह भी तो भुलाया नहीं जा सकता कि भारतीय राजनीति में 'सत्य' और 'अहिंसा' के जो महान् प्रयोग हमारे महान् नेता महात्मा गांधी ने किये हैं, उन्हींसे १९२० में सुलगाई गई विद्रोह की चिंगारी ने इतना प्रचण्ड रूप धारण किया है और आज की सफलता अधिकतर उन्हीं

प्रयोगों का सुन्दर परिणाम है। जो जीवन, जागृति, चैतन्य और शक्ति हमारे राष्ट्र में पिछले पच्चीस वर्षों में पैदा हुई है, वह भी उन्हीं प्रयोगों की देन है। इन महान् प्रयोगों के सिलसिले में जब महात्माजी ने महायुद्ध के विरुद्ध सत्याग्रह शुरू किया और "अंग्रेजो ! भारत छोड़ो" की मांग के साथ सारे राष्ट्र को "करो या मरो" के महामन्त्र की दीक्षा दी, तब १९२० में सुलगाई गई विद्रोह की चिंगारी ने दावानल का-सा प्रचण्ड क्रांति का विराट् रूप धारण कर लिया और अगस्त क्रान्ति की आग सारे देश में चारों ओर धधक उठी।

विद्रोह के सफलता के किनारे और राष्ट्र के आजादी के द्वार पर पहुँच जाने पर भी 'करो या मरो' के मन्त्र की दीक्षा को भुलाया नहीं जा सकता। इस महामन्त्र के पुण्य स्मरण को राष्ट्र के हृदय में जीवित बनाये रखने के लिये ही इस छोटी-सी पुस्तिका का सङ्कलन किया गया है। हिन्दुस्तान का जागृत तरुण विद्रोह, विप्लव, इन्कलाब अथवा क्रान्ति की दिव्य भावना से प्रेरित होकर आजादी के मार्ग को जल्दी तय कर सके और आजाद होने के बाद आजादी का संरक्षण करने में भी समर्थ बन सके,—इस लिये उसे 'करो या मरो' के महामन्त्र को याद रखना चाहिये। स्वदेश के लिये "महाराष्ट्र" की कल्पना को जगाने वाले स्वामी रामदास के परम शिष्य छत्रपति शिवाजी ने जिस दृढ़ संकल्प और तत्परता के साथ उस कल्पना को मूर्त रूप देने का उद्योग किया था, उसकी कहानी लिखने वाले कवि ने उसके लिये 'शरीरं वा पातेयम् कार्यं वा साधेयम्' के महामन्त्र का प्रयोग किया है। लोकमान्य तिलक ने "स्वराज्य" को "जन्मसिद्ध अधिकार" बताकर उसको प्राप्त करने की घोषणा की थी। महात्मा गान्धी ने उसकी प्राप्ति के लिये ही "करो या मरो" के महामन्त्र की दीक्षा दी है। महान् क्रांतिकारी नेता श्री सुभाषचन्द्र बोस ने आजादी के उद्योग में मृत्यु के आलिङ्गन करने पर भी हार न मानने का उज्वल आदर्श

हम सबके सामने उपस्थित किया है। इन सबसे अनुप्राणित होकर एक बार फिर हम सबको "करो या मरो" के महामन्त्र का उच्चारण विश्वास, निश्चय, दृढ़ता और ईमानदारी के साथ करना चाहिये। यह पुस्तिका पाठकों के हृदय में विश्वास, निश्चय, दृढ़ता और ईमानदारी को अवश्य पैदा करेगी।

: २ :

विद्रोह की ओर

भारतीय राष्ट्रीयता का प्रतिनिधित्व करने वाली कांग्रेस आज जिस विद्रोह का नेतृत्व कर रही है, उसके लिये उसकी स्थापना नहीं की गई थी। इसी प्रकार की अन्य अनेक संस्थाओं का भी सूत्रपात इन्कलाब के साथ न होने पर भी उन पर इन्कलाबी रंग चढ़ने में बहुत अधिक समय नहीं लगा। दीन, हीन, पराधीन जनता का पक्ष लेकर उठने वाली संस्थायें और संगठन कुछ ही वर्षों में इन्कलाब के रंग में रंग जाते हैं। भारतीय राष्ट्रीय महासभा--कांग्रेस को इन्कलाबी चोला पहिनने में चौथाई सदी भी नहीं लगी। पैंतीस वर्षों में तो उसने निर्भयता के साथ इन्कलाब का झण्डा फहरा कर विदेशी हकूमत के साथ डट कर लोहा तक लिया।

कांग्रेस के इस विकास की कहानी जितनी मनोरंजक है, उतनी ही कौतूहलपूर्ण भी है। उसकी स्थापना में कुछ उदार आशय अंग्रेजों का का भी हाथ था। भारतीय जनता का रोष व असन्तोष, वे यह नहीं चाहते थे कि, पूर के दिनों के बरसाती नाले का भयानक रूप धारण करे। उसको उन्होंने नहर की तरह बांध रखने के लिये कांग्रेस की स्थापना की थी। इसी लिये १८८५ में बम्बई में हुये पहिले अधिवेशन में वैधानिक प्रगति के सम्बन्ध में सबसे पहिला जो प्रस्ताव पास किया गया था, उसमें शासन-सम्बन्धी जांच के लिये एक शाही कमीशन नियुक्त

करने की मांग की गई थी। इसी प्रकार की मांगें निरन्तर पन्द्रह वर्षों तक की जाती रहीं।

१९०५ में बंग-भंग के साथ कांग्रेस ने पहली करवट बदली और तब बनारस के अधिवेशन में उसमें कुछ गरमी पैदा हुई। लेकिन, तब भी बंग-भंग का विरोध कर बङ्गाल को एक करने की अपील करने का केवल प्रस्ताव ही पास किया गया था। १९०६ में कलकत्ता में हुये अधिवेशन में बंगाल में शुरू हुये बहिष्कार और स्वदेशी की हलचल का समर्थन किया गया था। इसी अधिवेशन में दादाभाई नौरोजी ने सभापति के पद से दिये गये अपने भाषण में 'स्वराज्य' की चर्चा की थी। स्वराज्य के सम्बन्ध में तब स्वीकृत किया गया प्रस्ताव आज उपहासास्पद जान पड़ता है। १९०७ में सूरत में गरम—नरम—दल में संघर्ष होकर उस पर नरम दली लोगों का एकाधिकार हो गया और १९१७ तक उन्हीं का उस पर अधिकार रहा। १९१७ में लखनऊ में लोकमान्य तिलक ने स्वराज्य के मन्त्र का उच्चारण किया और शासन-सुधार-योजना के सम्बन्ध में एक समझौता होकर लम्बा प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

पहिले महायुद्ध में तन—मन—धन सर्वस्व की न्योछावर करके दी गई सहायता का पुरस्कार जब रौलेट एक्ट के रूप में मिला, उसके विरोध में किये गये प्रदर्शनों का दमन करने के लिये पंजाब में फौजी शासन से काम लिया गया, जलियानवाला बाग में निरीह जनता का भीषण नरसंहार किया गया और खिलाफत के मसले पर अंग्रेजों ने मुसलमानों के साथ गहरा विश्वासघात किया, तब कांग्रेस ने एक और जबरदस्त करवट ली। १९२० में हुये कलकत्ता के विशेष-अधिवेशन में और नागपुर में हुये वार्षिक अधिवेशन में 'भिक्षां देहि' की नीति का परित्याग कर कांग्रेस ने राष्ट्र को स्वावलम्बी बनने का मार्ग दिखाया। इसी के लिये अदालतों, स्कूलों व कालेजों, दरबारों, खिताबों धारासभाओं, मेसोपोटामिया भेजी जाने वाली फौजों की नौकरी और

विदेशी वस्त्र के बहिस्कार की योजना स्वीकार की गई। कांग्रेस का नया विधान बनाया गया। तिलक स्वराज्य फण्ड कायम किया गया। एक वर्ष में स्वराज्य प्राप्त करने का उल्लेख प्रस्ताव में करते हुए एक निश्चित कार्यक्रम का निर्देश भी उस में किया गया। १९२१ में अहमदाबाद में कांग्रेस का अधिवेशन युवराज की यात्रा के बहिष्कार की गरमी में हुआ। कलकत्ता और नागपुर में किये गये निश्चयों का समर्थन करते हुये सत्याग्रह के लिये राष्ट्रीय स्वयंसेवक दल खड़ा करने का निश्चय किया गया। युवराज की यात्रा के बहिष्कार को लेकर सरकार के साथ कांग्रेस की पहिली भिड़न्त तो हुई, किन्तु बड़े पैमाने पर आम सत्याग्रह चौरीचौरा के हत्याकाण्ड के कारण न हो सका। १९२३ में नागपुर में देशव्यापी झण्डा-सत्याग्रह हुआ। कुछ वर्ष बीतने पर लाहौर में १९२९ में आजादी की भावना ने फिर जोर पकड़ा। महात्मा गान्धी के प्रस्ताव और महर्षि मोतीलाल नेहरू के समर्थन पर पूर्ण आजादी के सम्बन्ध में जो महत्वपूर्ण ऐतिहासिक निर्णय किया गया, उस में कांग्रेस-ध्येय में निहित 'स्वराज्य'-शब्द का अर्थ 'पूर्ण स्वराज्य' अर्थात मुकम्मिल आजादी किया गया और उसके लिये प्रयत्नशील होने की लोगों से अपील की गई। असहयोगके कार्यक्रम को फिर से अपनाने पर जोर देते हुये अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी को सत्याग्रह करने का अधिकार दिया गया। इसी निश्चय के अनुसार १९३० से जनवरी मास की २६ तारीख को प्रति वर्ष 'स्वतन्त्रता-दिवस' मनाया जाने लगा और सामूहिक रूप से आजादी की प्रतिज्ञा की जाने लगी। साइमन कमीशन का इसी वर्ष जोरदार बहिष्कार हुआ।

गांधीजी की डाण्डी-यात्रा के साथ शुरू हुये नमक-सत्याग्रह ने एक नयी चेतना देश में पैदा की। करीब एक लाख लोग जेलों में गये। गांधी-इरविन-समझौता हुआ। कराची में कांग्रेस का महत्वपूर्ण अधिवेशन हुआ। गांधीजी और मालवीयजी दूसरी गोलमेज कान्फ्रेंस में शामिल होने के लिए लन्दन गये। उनके लौटते न लौटते देश में जो

गरमी पैदा हुई, उससे नमक सत्याग्रह से भी अधिक प्रचण्ड आन्दोलन सारे देश में व्याप गया। कई वर्षों तक यह आन्दोलन जारी रहा। कांग्रेस के गैरकानूनी रहते हुये भी दो अधिवेशन हुये। नियमित अधिवेशन १९३४ में बम्बई में डाक्टर राजेन्द्रप्रसादजी की प्रधानता में हुआ। लखनऊ तथा फैजपुर के अधिवेशन (३६-३७ में) पण्डित जवाहरलाल नेहरू और हरिपुरा तथा त्रिपुरी के अधिवेशन (३८-३९ में) श्री सुभाषचन्द्र बोस के सभापतित्व में हुये। १९४० में रामगढ़ में मौलाना अबुलकलाम आजाद के सभापतित्व में अधिवेशन होने के बाद छः-सात वर्षों तक फिर कांग्रेस को संघर्ष के युग में से गुजरना पड़ा। १९४० के बाद अब १९४६ के नवम्बर मास में मेरठ में कांग्रेस का अधिवेशन हो सका है।

इन छः वर्षों में अधिवेशन न होने पर भी कांग्रेस ने दृढ़ता और स्थिरता के साथ विद्रोह की ओर तीव्र गति से कदम बढ़ाया है। अगस्त १९४२ की विराट क्रांति किसी एक ही घटना का परिणाम नहीं है। सरकार द्वारा अपनाई गई स्वेच्छाचारपूर्ण नीति का वह अवश्यम्भावी, अनिवार्य और स्वाभाविक परिणाम था। इन वर्षों में घटी घटनाओं का साधारण परिचय उन दिनों में कांग्रेस की कार्यसमिति और महासमिति में स्वीकृत हुये प्रस्तावों से मिल जाता है। संघर्ष का प्रधान कारण हिन्दुस्तान को जबरन युद्ध में घसीट कर उसके धन-जन और साधनों का युद्ध में मनमाने ढंग पर काम में लाया जाना था। उस समय की केन्द्रीय असेम्बली तक की राय जानने की भी जरूरत महसूस न की गई। इसी के विरोध में कांग्रेसी सदस्यों ने केन्द्रीय असेम्बली का बहिष्कार तक कर दिया था। रामगढ़ कांग्रेस में (१९४०) में भी इसके विरोध में एक जोरदार लम्बा प्रस्ताव पास किया गया था। उसमें कहा गया था कि ऐसा करना स्वाभिमानी तथा स्वतन्त्रताप्रेमी राष्ट्र के लिये अपमानजनक है और कांग्रेस ऐसे साम्राज्यवादी युद्ध के साथ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भी कोई सहयोग नहीं कर सकती। हिन्दुस्तान से

ली गई सहायता को स्वेच्छापूर्वक दी गई सहायता न मान कर कांग्रेस-जनों और कांग्रेस से सहानुभूति रखने वालों को युद्ध में किसी भी प्रकार की सहायता या सहयोग न देने के लिए कहा गया था। पूर्ण स्वतन्त्रता अथवा मुकम्मिल आजादी की घोषणा करते हुए साम्राज्य की छत्रछाया में औपनिवेशिक स्वराज्य या ऐसी कोई अन्य चीज को स्वीकार करने से साफ इनकार कर दिया गया था। विधान-परिषद द्वारा अपने भाग्य के स्वयं निर्णय करने और अन्य राष्ट्रों के साथ स्वेच्छापूर्वक अपने सम्बन्ध कायम करने, प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलों की सदस्यता त्याग कर सत्याग्रह की तैयारी करने के लिए रचनात्मक कार्यक्रम को पूरा करने और कांग्रेस महासमिति अथवा कार्यसमिति को उसको शुरू करने का अधिकार देने का भी इसमें उल्लेख किया गया था। इस प्रकार एक बार फिर युद्ध के प्रश्न को लेकर कांग्रेस ने असहयोग एवं सत्याग्रह के मार्ग का अवलम्बन किया।

कांग्रेस ने अपने इस निश्चय को कई बार दोहराया। ब्रिटिश नौकरशाही के साथ असहयोग करने और युद्ध के विरुद्ध सत्याग्रह करने का निश्चय करके भी कांग्रेस युद्ध में हाथ बटाने को तैयार थी। लेकिन, उसकी स्थिति यह थी कि "केवल स्वतन्त्र और स्वाधीन हिन्दुस्तान ही राष्ट्रीय आधार पर अपनी रक्षा की जिम्मेवारी को निभा सकता है और युद्ध से पैदा होने वाली बड़ी समस्याओं को हल करने में हाथ बटा सकता है।" कांग्रेस के निश्चय के अनुसार युद्ध के विरुद्ध व्यक्तिगत सत्याग्रह शुरू किया गया। इस संघर्षमय परिस्थिति की ब्रिटिश सरकार ने शुरू में कुछ भी परवाह नहीं की और इसका सामना करने के लिए आर्डीनेंस जारी किये जाने लगे। अन्त में १९४२ में फरवरी मास में सर स्टफोर्ड क्रिप्स को यहां भेजने का नाटक रचा गया। दिल्ली में कई सप्ताह तक चर्चा चली। परिणाम उसका कुछ भी न निकला।

अगस्त तक परिस्थिति इतनी विषम हो गई कि ८ अगस्त १९४२ को कांग्रेस को खुली बगावत का ऐलान करना पड़ गया। बम्बई में

उन दिनों में हुई कांग्रेस महासमिति की बैठक में जो महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुआ, उसको "अंग्रेजो ! भारत छोड़ो" का नाम दिया गया है और उसके बाद हुई घटनाओं से उसको ऐतिहासिक महत्व प्राप्त हो गया है।

विद्रोह की ओर कांग्रेस के अग्रसर होने का यह क्रम है। सत्य और अहिंसा का जिनके लिए राजनीति में कोई स्थान न था और जो 'सत्याग्रह' और 'असहयोग' को इन्कलाब, क्रान्ति अथवा विद्रोह से उलटा माने हुए थे, उनकी भी आंखें खुल गई। उन्होंने विस्मय के साथ देखा कि राष्ट्र के निर्वीर्य और नपुंसक बना दिये जाने पर भी उसके हृदय में १८५७ का-सा विद्रोह या बगावत करने की भावना विद्यमान थी। उसकी पतली दुबली देह की सूखी हुई नसों पर यह चरितार्थ हो गया कि—

"दुर्बल को न सताइये, उसकी मोटी आह।
मुये चाम की सांस से लोह भस्म हो जाय।"

: ३ :

खुली बगावत की घोषणा

८ अगस्त १९४२ का ऐतिहासिक प्रस्ताव निस्सन्देह खुली बगावत की घोषणा थी; किन्तु वह बगावत नियमित रूप से कांग्रेस की ओर से शुरू नहीं की गई थी। सरकार के अन्धाधुन्ध दमन को गांधीजी ने 'पागलपन' कहा था। वस्तुतः जो कुछ भी इस प्रस्ताव के पास होने के बाद हुआ, वह सरकारी पागलपन का ही परिणाम था। फिर भी वह "खुली बगावत" से कम न था। शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित जार की फौजों ने रूस में बगावत करने वालों को एक बार तो गोलियों से भून ही डाला था। फ्रांस में १७९२ की क्रांति के शुरू में फौजों का अत्याचार पराकाष्ठा को पहुँच गया था। इंग्लैण्ड में स्वेच्छाचारी बादशाह जब-तब विद्रोही जनता की आवाज को पैरों तले कुचलते रहते थे। सभी देशों में इसी प्रकार का नंगा दमन जनता की जागृति के विरुद्ध होता रहा। लेकिन, अन्त में सर्वत्र उसी की विजय हुई।

जनता की खुली बगावत को इस देश में भी 'देश के दुश्मनों' का काम बताया गया और उनको 'जापान का साथी' भी कहा गया। लेकिन, यहां भी अन्त में उसकी विजय हुई। अहमदनगर के किले में उन दिनों में बन्द किये गए जनता के नेताओं के हाथों में आज देश के शासन की बागडोर है और वैसे ही लोग 'विधान परिषद्' में बैठ कर देश के भाग्य का निपटारा कर रहे हैं।

खुली बगावत की घोषणा करने वाले उस प्रस्ताव में युद्ध-जन्य परिस्थिति की विशेष रूप से चर्चा करते हुये मित्रराष्ट्रों की सफलता के लिए हिन्दुस्तान में से अंगरेजी हुकूमत के अन्त करने पर जोर दिया गया था। मित्रराष्ट्रों की उस नीति के सदा ही असफल होने का भी इसमें उल्लेख किया गया था, जिसका आधार आजादी और प्रजातन्त्र न होकर साम्राज्यवादी तरीकों और परम्पराओं को जारी रखना था। युद्ध का भविष्य तथा आजादी और प्रजातन्त्र की सफलता, कहा गया था कि, हिन्दुस्तान में से अंगरेजी हुकूमत के तुरन्त खत्म होने पर ही निर्भर है। साम्राज्यवाद को भी नाजीवाद एवं फासिस्टवाद के समान खतरनाक और उससे हिन्दुस्तान को मुक्त करने को सारे पराधीन मानव के लिए आशा का चिन्ह बताकर, कहा गया था कि, केवल कोरी प्रतिज्ञाओं या आश्वासनों से काम न चलेगा। हिन्दुस्तान से अंग्रेजी हुकूमत को तुरन्त हटाने की जोरदार मांग करते हुए अपनी सारी शक्ति, जिसमें सत्याग्रह भी शामिल था, मित्रराष्ट्रों की सफलता के लिए काम में लाने का भरोसा दिलाया गया था। अंग्रेजी हुकूमत को खत्म करके समस्त प्रमुख राष्ट्रीय दलों की अस्थायी सरकार कायम करने, उसके द्वारा नियुक्त विधान परिषद में भारत के लिए संघ-शासन की योजना तैयार करने और सारे विश्व की उलझन को सुलझाने के लिए उसका एक संघ बनाने की इस प्रस्ताव में बहुत विस्तार के साथ चर्चा की गई थी। हिन्दुस्तान की आजादी के मार्ग के सम्बन्ध में विदेशों में होने वाली चर्चा और आलोचना को विरोधी तथा अज्ञानमूलक बताते हुए यह विश्वास दिलाया गया था कि कांग्रेस चीन और रूस अथवा मित्रराष्ट्रों के लिए कोई नयी समस्या पैदा नहीं करना चाहती।

प्रस्ताव के अन्त में इंग्लैंड और मित्रराष्ट्रों से अपील करते हुए कहा गया था कि उस सरकार के विरुद्ध अपनी इच्छा को प्रकट करने में लगे हुये भारतीय राष्ट्र को कांग्रेस अब और अधिक रोक रखना न्यायसंगत नहीं समझती, जो उसको अपने और समस्त

मानव जाति के हित में कुछ भी करने न देकर उस पर जबरन अपना आधिपत्य जमाये रखना चाहती है। इसलिए कमेटी यह निश्चय करती है कि हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता एवं स्वाधीनता के उस अधिकार को हासिल करने के लिए, जिससे कोई भी इनकार नहीं कर सकता, अधिक से अधिक देशव्यापी पैमाने पर अहिंसात्मक तरीके पर सामूहिक संघर्ष शुरू करने की अनुमति दी जाय और उस सारी अहिंसात्मक ताकत को इसमें काम में लाया जाय, जो कि पिछले बाईस वर्षों में अहिंसात्मक संघर्ष से उसने प्राप्त की है। यह संघर्ष अनिवार्य रूप से गांधीजी के नेतृत्व में ही शुरू किया जायगा और कमेटी उनसे उसका नेतृत्व करने की प्रार्थना करती है।

जनता से अपील की गई थी कि वह आने वाली सारी मुसीबतों और दिक्कतों का हिम्मत, साहस और धैर्य के साथ सामना करे, गांधीजी के नेतृत्व में अपने संगठन को मजबूत बनाये रखकर अपने देश की आजादी के अनुशासित एवं नियन्त्रित सिपाहियोंके समान उनके आदेशों का पालन करे। उसको यह याद रखना चाहिये कि इसके संघर्ष का आधार अहिंसा है। ऐसा अवसर भी आ सकता है, जब आदेशों का जारी करना अथवा उस तक उनका पहुँचना संभव न रहेगा और किसी भी कांग्रेस कमेटी के लिए काम कर सकना नामुमकिन हो जायगा। ऐसा अवसर आने पर इस संघर्ष में भाग लेने वाले हर स्त्री-पुरुष को आम हिदायतों की सीमा में रहते हुए स्वयं काम करना होगा। स्वतन्त्रता को पसंद करने और उसके लिये प्रयत्नशील होने वाले हर स्त्री-पुरुष को स्वयं अपना नेता या रहनुमा बनकर उस कठोर मार्ग पर अग्रसर होना चाहिये, जिसमें आराम करने या रुकने के लिये कोई भी स्थान नहीं है और जो हमारे देश को निश्चित रूप से आजादी एवं मुक्ति पर पहुँचाने वाला है।

अन्त में कहा गया था कि इस संघर्ष का लक्ष्य कांग्रेस के लिये शक्ति प्राप्त करना नहीं है। शक्ति जब प्राप्त होगी, तब वह हिन्दुस्तान के सभी स्त्री-पुरुषों के लिए होगी।

इस प्रस्ताव से देश को जिस 'सामूहिक संघर्ष' की दावत दी गई थी, वह 'खुली बगावत' ही तो था। इसीलिए इस प्रस्ताव को खुली बगावत की घोषणा ही कहना चाहिये।

: ४ :

"करो"

'अंग्रेजो ! भारत छोड़ो'—इन तीन शब्दों में गांधीजी ने उस महान सत्य को प्रगट किया था, जो हर हिन्दुस्तानी के दिल और दिमाग में व्याप रहा था। इस भावना को शब्दों में प्रगट करके महात्माजी ने भारतीय राष्ट्र को खुली बगावत की दीक्षा दी थी। उसके लिये राष्ट्र का आह्वान करते हुये आपने बम्बई में कांग्रेस की महासमिति में ८ अगस्त के ऐतिहासिक प्रस्ताव को उपस्थित करते हुये कहा था कि—

कांग्रेस महासमिति के सदस्यों का दायित्व बहुत भारी है। यह दायित्व ठीक वैसा ही है, जैसा किसी पार्लमेंट या व्यवस्थापक-सभा के सदस्यों का होता है। कांग्रेस महासभा सारे भारत का प्रतिनिधित्व करती है। वह किसी एक संप्रदाय, जाति, वर्ग अथवा प्रान्त की संस्था नहीं है। शुरू से ही उसका यही दावा रहा है कि वह समूचे राष्ट्र की प्रतिनिधि-संस्था है। आप लोगों की तरफ से मैं दावा कर चुका हूँ कि आप लोग कांग्रेस महासभा के सदस्यों ही के नहीं, बल्कि सारे देश के प्रतिनिधि हैं ?

"देसी नरेशों के बारे में मैं यही कहूँगा, कि वे अंग्रेजी सत्ता ही के बनाए हुए हैं। इन देसी राज्यों के बनाने से अंग्रेज शासक-वर्ग का उद्देश्य केवल यही रहा है कि "अंग्रेजी भारत" और "देसी भारत" के बीच में वैमनस्य पैदा किया जाय। हो सकता है कि देसी राज्यों में

हमारे राष्ट्रीय जीवन के अत्यन्त संगीन वर्षों में हमारे कौमी झंडे की लाज संभालने वाले मौलाना अबुलकलाम आजाद के राष्ट्रपति-काल में ही अगस्त विद्रोह का शंख फूंका गया था।

और "अंग्रेजी भारत" में परिस्थितियां भिन्न-भिन्न हों; किन्तु जहांतक रियासतों व दूसरे प्रान्तों की साधारण जनता का सम्बन्ध है, कोई वास्तविक भिन्नता नहीं है। देसी राज्यों की प्रजा का भी प्रतिनिधित्व करने का कांग्रेस महासभा दावा करती है। राज्यों के प्रति कांग्रेस जिस नीति का अनुसरण कर रही है, वह मेरी ही प्रेरणा से निर्धारित हुई थी। राजागण चाहे जो कहें, उनकी प्रजा तो एक स्वर से यही कहेगी कि हम वही मांग रहे हैं, जिसकी उसे आवश्यकता है। तो यहांतक कहूँगा कि हम अपने आन्दोलन को यदि उसी तरह चला सकें, जैसे कि मैं चाहता हूँ, तो उससे राजागण को भी लाभ पहुँचेगा। कुछ रियासती नरेशों से मैंने न बारे में बातचीत की, तो उन्होंने अपनी विवशता प्रकट करते हुये कहा कि भारत की जनता तो हमसे भी अधिक स्वतंत्र है, क्योंकि वर्तमानवी शासकवर्ग जब चाहें, हमें पदच्युत कर सकते हैं।

"आज मुझे वह साधन प्राप्त है, जो इससे पहले मुझे प्राप्त न था। ईश्वर ने जो सुअवसर प्रदान किया है, उसका लाभ न उठाऊं, तो मैं मूर्ख सिद्ध होऊँगा। न केवल अपने आपको, किन्तु ईश्वर-प्रदत्त अहिंसा-रूपी बहुमूल्य रत्न को भी खो बैठूँगा।

"कुछ लोग कहते हैं कि मैं नाश ही करने पर तुला हुआ हूँ और रचनात्मक कार्य करना नहीं जानता। लेकिन, उनका यह आरोप निराधार है। जब स्वतंत्रता प्राप्त हो जायगी, तो जो भी नष्ट हुआ हो, उसका पुनर्निर्माण किया जा सकता है। आप लोगों को अपनी इस रचना-कुशलता पर अभी से भरोसा कर लेना होगा।

"सात ही प्रान्तों में सही, शासन-सूत्र संभालने का इससे पहले हमें अवसर प्राप्त हुआ था। हमने तब अपनी कार्य-कुशलता का अच्छा परिचय दिया था। स्वयं ब्रिटिश-सरकार ने उसकी प्रशंसा की थी। भारत आजाद होगया, तो भी आप लोगों का काम पूरा नहीं हो जायगा। आप लोग अहिंसात्मक सेना के सैनिक तब भी बने रहेंगे। सशस्त्र फौजी नेताओं के हाथों में राज्य-सत्ता आ जाती है, तो वे तत्काल ही तानाशाह

बन बैठते हैं। लेकिन, हमारी योजना में तानशाहों के लिए जगह नहीं होगी। जो योग्य होंगे, वे ही शासन-सूत्र संभालेंगे। संभव है किसी पारसी के हाथों में राज्य-भार सौंपा जाए। तब आपको यह न कहना चाहिए कि आजादी के लिए लड़ने वालों में तो हिन्दुओं की ही संख्या अधिक रही है और मुसलमानों एवं पारसियों की कम। पारसी के हाथों शासन क्यों सौंपा जा रहा है? ऐसा कहना ठीक नहीं होगा। शासन-सूत्र किसके हाथों सौंपा जावे, इसका निर्णय तो भारत के जन-साधारण करेंगे।

"कुछ लोग अंग्रेजों से नफरत करते हैं। ऐसे भी कुछ लोग हैं, जो जापानियों के आक्रमण को बुरा नहीं समझते। यह बड़ा खतरनाक विचार है। इस नाजुक घड़ी में यदि हम अपने कर्तव्य का पालन नहीं करें, तो वह हमारे लिए उचित नहीं होगा। हम अपनी आजादी लड़ कर लेंगे। वह कहीं आकाश से टपक नहीं सकती। उसके लिए लड़ना होगा। बलिदान देना होगा। तब अंग्रेज हमें आजादी देने को विवश होंगे। लेकिन, अंग्रेजों से घृणा न करनी चाहिये। मेरे मन में किसी भी अंग्रेज के प्रति वैर-भाव या द्वेष नहीं। मित्र के नाते मेरा कर्तव्य है कि उन्हें सचेत कर दूं। उनकी भूलों से उन्हें परिचित करा दूं। अंग्रेज नाश के गड्ढे के किनारे पर खड़े हैं। उनको बचाना मेरा कर्तव्य है; चाहे वे पसन्द करें, चाहे न करें।

"कुछ लोग मेरी इस बात पर हंस सकते हैं। परन्तु मैं सच सच कह रहा हूं। अब भी जब कि मैं अपने जीवन में सबसे बड़ा संघर्ष जारी करने वाला हूं। बरतानियों के लिए मेरे मन में द्वेष का लेश-मात्र भी नहीं। यह विचार मेरे मन में कभी उठा ही नहीं कि अंग्रेज तकलीफ में पड़े हुए हैं; चलो उन्हें धक्का दे दें। संभव है कि क्रोध में आकर वे लोग ऐसा काम करें, जिससे आप उभड़ जाएं। फिर भी मैं आपसे कहूंगा कि आप हिंसात्मक प्रकृति से काम न लें। अहिंसा को लज्जित न कर दें।

"आप लोग जानते हैं, मैं तेज रफ्तार से जाना पसन्द करता हूँ। फिर भी अब उतावली नहीं करना चाहता। सुना है कि सरदार पटेल ने बताया था कि एक ही सप्ताह में आन्दोलन समाप्त हो जाएगा। यदि ऐसा हुआ, तो यह महान् चमत्कार होगा। हो सकता है अंग्रेजों को सही रास्ता सूझ जाए। हो सकता है जिन्ना साहब के भी मन में परिवर्तन हो जाए। आखिर वे यह सोच सकते हैं कि जो लोग संघर्ष कर रहे हैं, वे भी इसी धरती के तो लाल हैं। यदि मैं हाथ पर हाथ धरे बैठा रहूँ, तो मेरा 'पाकिस्तान' किस काम का होगा?

"भारत छोड़ो" का नारा जब मैंने बुलन्द किया था, तब भारत के लोग जो हताश हो रहे थे, ऐसा अनुभव करने लगे कि मैंने उन्हें एक नया ही मार्ग बता दिया। इतने सुविस्तृत रूप में अहिंसात्मक ढङ्ग से प्रजातन्त्री सत्ता की स्थापना का प्रयत्न, सचमुच, इतिहास में अनूठी ही आजमाइश है। मेरे जनतन्त्रवाद का यह अर्थ होगा कि प्रत्येक व्यक्ति अपना स्वयं मालिक हो।

"आपके सामने जो प्रस्ताव पेश किया गया है, उसका अर्थ यही है कि हम कूपमण्डूक नहीं रहना चाहते। हमारा ध्येय विश्व-संघ की स्थापना करना है और उसकी स्थापना अहिंसा ही के द्वारा साध्य हो सकती है। आप लोग अहिंसा को सिद्धान्त के रूप में स्वीकार कर लें। मेरे लिए तो वह धर्म का-सा महत्व रखती है।"

अन्त में गान्धी जी ने कहा कि "मैं इस संघर्ष में आप लोगों का सेनापति बनकर नहीं, बल्कि विनम्र सेवक की हैसियत से आपका नेतृत्व करना चाहता हूँ। मैं अपने आपको देश का प्रधान सेवक ही मानता हूँ।

"मैं जानता हूँ कि मेरे कितने ही विदेशी एवं हिन्दुस्तानी मित्रों ने मुझ पर विश्वास करना छोड़ दिया है। वे मेरे विवेक और नीयत तक को सन्देह की दृष्टि से देखने लगे हैं। अपनी बुद्धि को मैं खो भी गया, तो वह कुछ महत्व नहीं रखता। किन्तु अपनी नेक-नीयती को मैं अमूल्य खजाना मानता हूँ और उसको गंवा नहीं सकता।

"इस पृष्ठभूमि के साथ मैं यह घोषणा कर देना चाहता हूँ कि चाहे मेरे पाश्चात्य मित्रगण मुझे अविश्वास एवं अनादर की दृष्टि ही से क्यों न देखें; फिर भी जो कुछ मेरे मन में है,उसे व्यक्त कर देना मेरा कर्तव्य होगा। चाहे आप उसे अन्तरात्मा की पुकार कहें, चाहे कुछ और। मैं उसे दबाकर नहीं रख सकता। मेरी अन्तरात्मा कहती है कि "तुम्हें अकेले ही सारे विश्व के विरुद्ध लड़ना होगा। जबतक तुम दुनिया की लाल-लाल आंखों से निर्भीक होकर आंख मिलाओगे, तबतक सुरक्षित रहोगे। संकट से न डरो। आगे बढ़ो। सिर्फ एक परमात्मा से डरो और किसी से नहीं।

"इस संघर्ष में आप लोगों को सर्वस्व बलिदान देना होगा। बीबी, बच्चों, बन्धु, मित्र सबसे सम्बन्ध तोड़ना होगा।

"कांग्रेस ने आजादी की मांग की, तो कौनसा भारी अपराध कर दिया? इसके लिये उस पर अविश्वास करना क्या ठीक है? अंग्रेज कैसे यह कह सकते हैं? संयुक्त-राष्ट्र अमरीका के प्रेजीडेन्ट कैसे कह सकते हैं? चियांगकाई शेक जो अपने राष्ट्र के अस्तित्व की रक्षा के लिए जापानियों से जीवन-मरणके संग्राममें जूझे हुए हैं, कांग्रेस पर अविश्वास कैसे कर सकते हैं? जवाहरलाल को अपना साथी मानने के बाद, आशा है, वे कांग्रेस पर अविश्वास न करेंगे।"

"एक जमाना था, जब मुसलमान कहा करते थे कि हिन्दुस्तान हमारा है। तब वे कोई नाटक नहीं करते थे। वे हमारे साथ लड़े थे। मुसलमान और हिन्दू दोनों कहते हैं कि एकता होनी चाहिये। मैं जब छोटा था, मदरसे में हिन्दू, मुसलमान और पारसी सब पढ़ते थे। हम यदि हिन्दुस्तान में अमन से रहना चाहते हैं, तो पड़ोसी के प्रति कर्तव्य का पालन करना चाहिये। अफ्रीका में भी मुसलमानों ने मुझ पर विश्वास किया और मेरा साथ दिया। वे मेरी बात को न्याय की बात मानते थे। खिलाफत में हमारा अपना स्वार्थ क्या था? मैं गाय की पूजा करता हूँ। सिर्फ इन्सान ही नहीं, सारे जीव एक हैं। लेकिन, गाय

को बचाने के लिये भी मैं सौदा नहीं करना चाहता। मैं तो मुसलमानों के साथ खाना भी खा लेता हूँ ! मैं तो भङ्गी के साथ भी खा लेता हूँ। जिन्ना साहब भी तो कभी कांग्रेसी थे। वे भी हमारे भाई हैं। खुदा उनको बड़ी उमर दे। वे भी कभी याद करेंगे कि गांधी ने कभी धोखा नहीं दिया, कभी झूठी बात नहीं कही। वे या मुसलमान नाराज हैं, तो क्या किया जाय ? यदि पाकिस्तान सही चीज है, तो वह जिन्ना साहब और हर मुसलमान की जेब में पड़ा है। अरब में मुहम्मद साहब अकेले खड़े हो गये और उन्होंने इस्लाम को जारी कर दिया। आप भी करोड़ों के साथ देने की राह न देखें। देने या लेने से पाकिस्तान का मसला हल न होगा। छीन-मार कर बांटने वालों के हाथ क्या लगेगा ? जो चीज ठीक नहीं है, उसको तलवार के जोर पर भी लिया नहीं जा सकता। मुहम्मद साहब का बताया हुआ यह तरीका नहीं है। हम एक बन जांय। दिल में कोई परदा न रखें। हिन्दुस्तान को विदेशी पंजे से छुड़ाने के लिये सब मिल कर कोशिश करें। पाकिस्तान भी तो हिन्दुस्तान का ही हिस्सा है। तो क्यों न उसके लिये लड़ें ? ऐसा करेंगे, तो जल्दी कामयाब होंगे। छः महीना तो बड़ी बात है। आज रात को ही हम आजाद हो सकते हैं। पर, यह याद रखो कि हिन्दू-मुस्लिम-एकता चाहिये। अगर वह नहीं होती,तोभी आजादी तो लेनी ही है। यह आजादी अकेले हिन्दुओं के लिये नहीं; पैंतीस करोड़ के लिये लेनी है। कांग्रेस प्रजातन्त्री संस्था है। यह सभी के लिये लड़ती है। उसका दरवाजा सबके लिये खुला है।

"कुछ लोग कहते हैं कि अपनी तय्यारी करो। पर, तय्यारी क्या करूं ? भले ही मेरी तय्यारी, मेरा लश्कर और मैं भी कच्चा क्यों न होऊं ? मुझे खुदा पर भरोसा कर उसका हुक्म पूरा करना है। वह मेरी पीठ पर है। अब बीच में समझौता नहीं है। यह संघर्ष नमक बनाने की सुविधायें लेने या शराबबन्दी के लिये नहीं है। अब तो मैं एक ही चीज लेने जा रहा हूँ और वह है आजादी। मैं वह गांधी नहीं, जो कुछ

चीज लेकर जेल में से लौट आयेगा। आपको तो मैं एक मन्त्र 'करो या मरो' का दे रहा हूँ। जेल को आप भूल जांय। आप सदा यह याद रखें कि मैं खाता हूँ, पीता हूँ, सांस लेता हूँ, तो सिर्फ इस लिये कि मुझे गुलामी की जंजीर तोड़नी है। मरना जानने वालों ने ही जीने की कला जानी है। आजादी डरपोकों के लिये नहीं। जिनमें करने की हिम्मत है, वही जिन्दा रह सकते हैं। हम चींटी नहीं। हम हाथी और शेर से भी बड़े हैं।

अखबार वालों को निर्भयता से काम लेने या उनको बन्द कर देने की सलाह देते हुये राजाओं से गान्धीजी ने मार्मिक अपील करते हुये कहा कि "राजा लोग प्रजा से कह दें कि राज तुम्हारी मिलकियत है। प्रजा उनको दोनों हाथों पर उठा लेगी। तब राजा और वंश-परम्परा दोनों रह जायेंगी। आप गुलामी में न रहें। हिन्दुस्तानियों की सल्तनत में रहें। पोलिटिकल डिपार्टमेंट को लिख दें कि सल्तनत मर गई, तो हम कहां रहेंगे। राजाओं के लिये कोई कानून नहीं। वे यदि पोलिटिकल डिपार्टमेंट की जबानी बातों को ही कानून मानें, तो मैं क्या करूं? यदि आप रैयत के साथ रहेंगे, तो आप उसके सरदार रहेंगे।

सरकारी जजों, सिपाहियों, अफसरों, प्रोफेसरों आदि से आपने कहा कि "साफ साफ कह दो कि हम कांग्रेस के आदमी हैं। हम पेट के लिये काम करते है, पर आदमी तो कांग्रेस के हैं। आप हमारे ही लोगों पर लाठी-गोली चलाने की बात कहेंगे, तो नहीं मानेंगे। अपने दुश्मन पर चला देंगे। कितने ही हवाई जहाज आयें, हमें परवा नहीं।

"आजादी के स्पर्श के बिना करोड़ों आदमियों के लिये दुनिया की मुक्ति के यज्ञ में दिल से भाग लेने का कोई और रास्ता हो नहीं सकता। आज तो जनता के प्राणों का भी शोषण कर लिया गया है। उसे पीस दिया गया है। उसकी निस्तेज आंखों में तेज लाना ही तो आजादी है। वह कल नहीं;—आज ही आनी चाहिये। इसी लिये कांग्रेस से मैंने आज यह बाजी लगवाई है कि वह या तो देश को

आज़ाद करेगी अथवा खुद फना हो जायगी। 'करो या मरो' हमारा मूल मन्त्र होगा।"

मातृभूमि का आह्वान

पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने कहा:—

"यदि भारत ही तबाह हो गया, तो फिर जीवित ही कौन रह सकता है ? देश का पतन सबका पतन होगा। मातृभूमि आवाहन कर रही है। देश के सभी सपूत,—स्त्री, पुरुष, जवान और बुड्ढे सब ध्यान से सुनें। उन्हें सुनना होगा। चाहे जो हो, हम सबको अपने कर्तव्य पर अटल रहना होगा। जो बूढ़े हैं, कमजोर हैं और डरपोक हैं, वे जहां चाहें, भाग जाएं। कर्त्तव्य से जी चुरानेका विचार न करें। हम लोग अपनी इस प्यारी मातृभूमि को छोड़कर, कहीं न जाएंगे। हम एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने का विचार ही नहीं कर सकते। हम अन्त तक यहीं, इसी भूमि पर डटे रहेंगे; जब तक कि मृत्यु हमें बलपूर्वक हटा न ले जाए। हमें चाहिए कि हम अपनी मातृभूमि की सुयोग्य सन्तान साबित हों और उसकी गरिमामय परम्परा की रक्षा करें। हम किसी भी आक्रमण करने वाले के सामने न झुकेंगे। चाहे अंग्रेज हों चाहे जापानी; हम सभी आक्रमणकारियों के विरुद्ध डटकर लड़ेंगे। हम आग में, संघर्षकी बलिवेदी में, कूद चुके हैं। या तो सफल होंगे अथवा जलकर मर मिटेंगे। अपने देश की स्वतन्त्रता की खातिर अपने प्राणों तक की बलि देने के लिये मैं तैयार हूँ। हम विजय प्राप्त करेंगे या उसके लिये प्रयत्न करते हुये मर मिटेंगे।"

हमारा महामन्त्र

सरदार वल्लभभाई पटेल ने गर्जना करते हुए घोषणा की—

"हमारा आन्दोलन बिजली की रफ़्तार से चलेगा। कोई भी हिन्दुस्तानी इससे अलग न रहे। सबके सब इस महान् संग्राम में जुट

जाएं। हमें अपना सर्वस्व बलिदान करना होगा। हमने अपने अनुभव से जान लिया है कि आज़ाद हुए बिना विदेशी आक्रमण से देश की रक्षा नहीं कर सकेंगे। हमारा एकमात्र ध्येय हिन्दुस्तान को आजाद करना है। हमारा नारा है—"अंग्रेजो! भारत छोड़ो!" हमारा महा-मन्त्र है—"करेंगे या मरेंगे।" कांग्रेस को धमकियों से डराया नहीं जा सकता। दमन-नीति से हमें कुचला नहीं जा सकता। भारत के इतिहास में, अपितु विश्वके इतिहास में ऐसा आन्दोलन पहिले कभी नहीं हुआ। अब जेल जाने ही से काम न चलेगा। और भी यातनायें भोगनी होंगी। और भी महान् बलिदान देने होंगे। अब तो प्राणों की बलि चढ़ानी होगी।

हम यह नहीं चाहते कि कांग्रेस ही के हाथों शासन की बागडोर सौंप दी जाय। बरतानिया शासन का दायित्व किसी भी हिन्दुस्तानी राजनीतिक दल या सम्प्रदाय के लोगों के हाथों सौंपा जाये; तो हमें सन्तोष हो जायेगा। हम यही चाहते हैं कि भारत का शासन भारतीय करें। विदेशियों की आधीनता से मुक्त होकर अपने भाग्य का आप निर्णय करना यही हमारा लक्ष्य है। "भारत छोड़ो!" नारे का यही तात्पर्य एवं उद्देश्य है। भारत के सब लोग—क्या जवान क्या बूढ़े, क्या विद्यार्थी क्या मज़दूर सब—इस महान् आन्दोलन में भाग लेकर अपने जीवन को सार्थक करें। स्वतन्त्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। अबके हम आज़ादी हासिल करके ही दम लेंगे,—चाहे जो हो।

आगे बढ़ो। स्वातन्त्र्य संग्राम बराबर जारी रक्खो। विजय प्राप्त करो या वीरोचित ढंग से मरो। देशवासियों के लिए मेरा यही सन्देश है।"

हमारा विधान

डा० राजेन्द्रप्रसाद ने कहा—

"अंग्रेज शासकों से हमारी यही मांग है कि "भारत छोड़ो।" इसी मांग में भारत के भविष्य का भाग्य-बीज छिपा हुआ है। हमने निश्चय

कर लिया है कि अंग्रेज अपनी इच्छा से भारत छोड़कर न निकले; तो अपनी सारी अहिंसात्मक शक्ति लगाकर एक महान् संग्राम जारी रक्खेंगे, जिसकी पवित्रता और उग्रता देखकर इतिहास की आंखे चौंधिया जायेंगी। देशभक्त भारतीयों के लिए एक चेतावनी देना उचित होगा। यह आन्दोलन जेल जाने तक ही सीमित न रहेगा। यह हमारा अन्तिम स्वतन्त्रता-संग्राम होगा। इसलिए यह सर्वथा संभव है कि विदेशी शासक हर प्रकार के अत्याचार से काम लेकर हमें कुचलने का प्रयत्न करें। गोली-कांड, बम-वर्षा, सम्पत्ति की ज़ब्ती आदि हर विपत्ति का हमें सामना करना होगा। इसके लिये देशभक्तों को प्रस्तुत रहना होगा। प्राणों को तुच्छ समझ कर आगे बढ़ो। अन्त तक डटे रहो। अहिंसा वह शस्त्र है, जिससे संसार भर की हिंसात्मक शक्तियों का हम बेखटके प्रतिरोध कर सकते हैं।

प्रत्येक देश के इतिहास में ऐसा अवसर आता है, जब उसे अपना सर्वस्व बलिदान कर देना पड़ता है। भारत के इतिहास में अब ऐसा ही अवसर उपस्थित हुआ है। हमारे सामने जीवन-मरण का प्रश्न उपस्थित है। हमें सब कुछ स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर न्योछावर करना होगा। प्राणों तक की भेंट चढ़ानी होगी। कांग्रेस महासभा ने जो कदम उठाया है, वह बड़ा ही महत्वपूर्ण है। या तो हम सफलता प्राप्त करेंगे या प्राणोत्सर्ग कर देंगे। गुलाम रहने से मौत अच्छी।

इस संघर्ष से सारे देश में भीषण आग सुलग उठेगी। यह या तो देश के आजाद होने पर अथवा कांग्रेस के मरमिटने पर ही बुझ सकेगी।"

घर में घुसे चोर

पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्त ने कहा—

"कांग्रेस सारी भारतीय जनता की सेवा करने के लिए ही है। जनता की ही खातिर वह लड़ती आई है और आगे भी लड़ेगी। भारत की स्वतन्त्रता की समस्या का अभी, इसी घड़ी, निपटारा हो जाना

चाहिये। अब और विलम्ब सहा नहीं जाता। हमें किसी भी आक्रमणकारी राष्ट्र से सहानुभूति नहीं। न हम किसी विदेशी की सहायता की प्रतीक्षा करते हैं। हम तो चाहते हैं कि भारत को विदेशी आक्रमण से बचायें। लेकिन, जब तक हम स्वयं अपने घर के मालिक नहीं हैं, तब तक बाहरी आक्रमण से देश की रक्षा कर ही कैसे सकते हैं? घर के अन्दर जो चोर घुसे हुए हैं, देश को जो विदेशी आक्रमणकारी धर दबाए हुए हैं; उन्हें पहिले बाहर निकालना होगा। तब फिर किसी बाहरी राष्ट्र का साहस नहीं होगा कि हमारी ओर आंख उठाकर भी देखे।

हमने बहुत चाहा कि बरतानिया को तंग न करें। तंग न करने का मतलब आत्महत्या तो नहीं हो सकता। बरतानिया ने हमारी न्यायपूर्ण मांगें स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। अब हमारे आगे एक ही रास्ता रह गया है और वह है संग्राम का रास्ता—बलिदान का रास्ता। इस नाजुक घड़ी में हरेक भारतीय का कर्तव्य है कि महात्मा गांधी के आदेश को कार्यान्वित करें। संग्राम जारी रक्खें, जब तक कि विजय हाथ न आ जाय।"

हमारा महासंग्राम

कृपलानीजी ने कहा—

"कांग्रेस ने राष्ट्रीय सरकार की मांग की। अपने लिए नहीं;—सारे देश के लिए। बरतानवी हुकूमत जिना साहब या किसी और के हाथों में हिन्दुस्तान का शासन-सूत्र सौंप दे, तो हम प्रसन्न होंगे। हम यही चाहते हैं कि हिंदुस्तान के भाग्य का निर्णय हिंदुस्तानी स्वयं करें। कांग्रेस सत्ता की आकांक्षा नहीं रखती। हमारा ध्येय है भारत को विदेशी चुंगल से विमुक्त करना। महात्मा जी ने जो कदम उठाया है, वह बहुत सोचने विचारने के बाद ही उठाया है। परिस्थिति का हर पहलू से गहरा अनुसंधान करने के बाद ही देश को संघर्ष के पथ पर अग्रसर करने के लिए गांधी जी लाचार हुए हैं।

प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य है कि परिस्थिति की विषमता का अनुभव करके अपने महान् नेता के दिखलाये पथ पर अग्रसर हो। अबका आंदोलन स्वतंत्रता का अन्तिम महासंग्राम होगा। इसका ऐतिहासिक महत्व अद्वितीय होगा। हमने एक महामन्त्र की दीक्षा ली है "करेंगे या मरेंगे।" जब तक अपने उद्देश्य में कृतकार्य न हो जाएं, हम संघर्ष के पथ पर, बलिदान के पथ पर, अविचलित भाव से बढ़ते चलेंगे। हमारी समर-यात्रा तब तक बन्द न होगी, जब तक हम अपने लक्ष्य—भारत की पूर्ण स्वतन्त्रता—पर पहुँच न जाएंगे। चाहे धरती फट जाए, चाहे आकाश टूट कर गिर जाए। हम विचलित न होंगे। "करेंगे या मरेंगे।"

तुरन्त आजादी

मौलाना अबुल कलाम आजाद ने कहा—

"हमारी मांग की यह अन्तिम रेखा है। अव्यवस्था और अराजकता के नाम से व्यर्थ का डर पैदा करने की कोई जरूरत नहीं है। यदि अंग्रेज सरकार सच्ची और ईमानदार है, तो वह तुरन्त इसका परिचय दे सकती है। कोरे आश्वासनों और वायदों पर हम निर्भर रहना नहीं चाहते। हमें तो तुरंत आजादी चाहिये। आजादी मिलते ही हम युद्ध में हाथ बटाकर विजय प्राप्त करने के लिये मित्र राष्ट्रों के साथ संधि कर लेंगे। यह कहना बेहूदा है कि हम देश में किसी भी सरकार को न चाहकर अराजकता पैदा करना चाहते हैं। "अंग्रेजो! भारत छोड़ो" का इससे कम या अधिक और कुछ भी अर्थ नहीं है कि शासन की सम्पूर्ण सत्ता तुरंत हिंदुस्तानियों के हाथ में सौंप दी जानी चाहिये। इसके लिये हमें जो कुछ भी करना है, अभी कर लेना है।"

: ५ :

"मरो"

"करो या मरो" के महामन्त्र की दीक्षा लेकर भारतीय राष्ट्र अभी कुछ करने की योजना तक न बना पाया था कि सरकार ने अन्धा दमन शुरू कर दिया। महात्माजी को वायसराय के साथ पत्रव्यवहार तक करने का अवसर न दिया गया और देशव्यापी दमन शुरू कर दिया गया। कुछ ही दिनों में वह दमन पागलपन की पराकाष्ठा को पहुँच गया। इस पागलपन का प्रतिरोध जिस धैर्य, हिम्मत, साहस और बहादुरी के साथ किया गया, उससे संसार के इतिहास में खुली बगावत का एक और नया शानदार अध्याय जुड़ गया। हमारे देश के इतिहास में इस बगावत का वही स्थान है, जो फ्रांस, रूस, तुर्की, अमेरिका तथा इंग्लैण्ड आदि में हुई बगावतों का उन देशों के इतिहास में है। जिस बड़े, विस्तृत और व्यापक पैमाने पर यह बगावत हुई, वह १८५७ के खुले विद्रोह को भी मात दे गई। संसार की किसी और बगावत में इतनी अधिक जनता ने और इतने बड़े देश ने भाग नहीं लिया। १८५७ का विद्रोह अधिकतर फौजों तक ही सीमित था। उसमें जनता का हिस्सा कुछ भी न था। १९४२ का विद्रोह सच्चे अर्थों में जनता की खुली बगावत थी। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इससे सोयी हुई, निराश, हताश और निर्जीव बना दी गई जनता में नयी आशा, नया उत्साह और नयी शक्ति के साथ नया विश्वास भी पैदा होगया। १८५७ के बाद उनको १९४२

में यह पता चला कि स्वतंत्र होने की उनमें सामर्थ्य है, वे स्वाधीन हो सकते हैं और विदेशी हकूमत का खात्मा करके, अपनीमत कायहकूम करके, अपना राज चला सकते हैं। नमक सत्याग्रह को लेकर हुआ संघर्ष और अन्य भी ऐसे सत्याग्रह काफी देशव्यापक हुये थे और उनमें एक लाख तक नर-नारी जेलों में गये थे, गोली व लाठी का हिम्मत के साथ सामना किया गया था और बहुत बड़ी मात्रा में त्याग एवं बलिदान भी किया गया था; फिर भी उन आन्दोलनों या संघर्षों का आधार व्यक्तिगत सत्याग्रह या असहयोग ही था। १९४२ की बगावत में जनता ने सामूहिक तथा सार्वजनिक रूप में भाग लिया। यह सच्चे अर्थों में जनता का खुला विद्रोह था। इससे पहिले संघर्षों का लक्ष्य सरकार के आतंक को नष्ट कर जनता में आजादी की भावना को भरना होता था। जिस पुलिस, जेल, कचहरी और फौज के आतंक की नींव पर वह कायम थी उसको हिलाकर खोखला किया जाता था और मुख्यतः जेलों को भरा जाता था। इस विद्रोह में मोर्चा बदल गया। जेलों को भरना लक्ष्य न रहा। पुलिस की आंखों में धूल झोंक कर, जेल से बाहर रह कर और संभव हो तो जेल की दीवार फांद के बाहर आकर काम करना, सरकार की सत्ता पर हमला करना और सब संभव उपायों से आजादी प्राप्त करना इस संघर्ष का लक्ष्य था। शस्त्रास्त्र से विहीन और नेताओं से भी विहीन जनता जिस साहस के साथ उठ खड़ी हुई, जिस बिजली से, भी अधिक तेजी से उसने विदेशी हकूमत के अड्डों पर जहां-तहां धावा बोल दिया और अंग्रेजी राज के दुर्भेद्य समझे जाने वाले किले की सुदृढ़ दीखने वाली दीवारें पहले ही धावे में ताश के पत्तों की दीवारों की तरह जब गिरनी शुरू हुईं, तब यह सब देखकर दुनिया चकित रह गई। भारतीय जनता के हृदय में आत्मविश्वास की वेगवती लहर पूरी तेजी के साथ दौड़ गई। यह आत्मविश्वास इस विद्रोह की सबसे बड़ी देन है और निश्चय ही यह देन निकट भविष्य में होनेवाली देशव्यापी बगावत के लिये वरदान सिद्ध होगी।

'मर' मिटने की धारणा से कुछ 'कर' गुजरने के लिये उतारू हुई जनता ने जो कुछ भी किया, उसमें अपने नेताओं के 'करो या मरो' के आदेश का अक्षरशः पालन किया गया था। "अंग्रेजो! भारत छोड़ो" के नारे की गूंज देश के सुदूर कोनों तक में जा फैली। राजनीति से कोसों दूर रहने वाले गांवों में भी उसकी ध्वनि गूंजने लगी। 'करो या मरो' की साधना से उनकी नसों में नये रक्त का संचार हो गया। दो हजार मील लम्बे और दो हजार मील चौड़े देश के चालीस करोड़ निवासियों में जिस विद्रोह की आग सुलग उठी, जिसने हिमालय की पहाड़ियों में भी गरमी पैदा कर दी, जिससे राजपूताना के रेतीले मैदानों में भी आशा की हरियाली लहलहा उठी, जिसके कारण बड़े बड़े शहरों की शाही अट्टालिकाओं में चैन से सुख की नींद सोने वालों ने भी करवट बदल ली और जिसने आबाल-वृद्ध नर-नारी को झकझोर कर उठा दिया, उसका इतिहास कुछ पृष्ठों में तो क्या, बड़ी-बड़ी पुस्तकों में भी लिखा नहीं जा सकता। इन्कलाब का इतिहास न किसी ने कभी लिखा है और न कोई कभी लिख ही सकेगा। इसी प्रकार इन्कलाब के गर्भ से जन्म लेने वाले विद्रोह या बगावत का इतिहास लिख सकना भी प्रायः असम्भव ही है। इन्कलाब और बगावत से तो नये इतिहास का निर्माण होता है। १९४२ का इन्कलाब भी नये इतिहास और साथ ही हमारे देश का भी नव-निर्माण कर गया है।

अच्छा होता यदि इन पृष्ठों में उसकी हम हलकी-सी झांकी दे सकते। केवल घटनाओं का ब्यौरा दे देना तो इतिहास नहीं है। फिर इन पृष्ठों में वह ब्यौरा भी तो दिया नहीं जा सकता। हर प्रान्त में और हर शहर में ही नहीं, किन्तु हर गांव में जो घटनायें घटी हैं, उनकी अपनी ही कहानी और अपना ही इतिहास है। गोरों की गोली के शिकार होने वालों अथवा फांसी के तख्तों पर झूल जाने वालों की वीर गाथायें उनके गांवों के लोग आने वाली सन्तानों को गौरव के साथ सुनाया करेंगे। एक ओर चिमूर व आष्टी सरीखे गांवों में घटी

पाशविकता की नृशंस एवं विफल घटनायें अंग्रेजी राज के दामन पर सदा के लिए कालिख पोत गई हैं और दूसरी ओर बलिया, सतारा तथा मिदनापुर आदि में कायम हुये 'स्वराज्य' गौरव के साथ हमारा माथा ऊंचा कर हमारे हृदयों में आत्म विश्वास की अजेय भावना भर गये हैं।

बम्बई

भारतीय राष्ट्रीयता की प्रतीक 'कांग्रेस' को १८८९ में जन्म देने वाले बम्बई शहर को ही इस खुले विद्रोह का शंख फूंकने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पागलपन की पराकाष्ठा को पहुँचा हुआ सरकार के दमन का श्रीगणेश भी यहीं से हुआ था। १९४२ की क्रान्ति की वीर लक्ष्मी-बाई बनने का गौरव प्राप्त करने वाली वीरांगना श्रीमती अरुणा आसफ-अली ने गवालिया टैंक के मैदान में ९ अगस्त की सवेरे जो राष्ट्रीय झण्डा सरकारी आक्रमण के बीच फहराया था, उनको भी तब पता न होगा कि, वह १९४२ के अगस्त विद्रोह की सूचना-मात्र था और उसी दिन शाम को शिवाजी पार्क में हुई मुठभेड़ देशव्यापी बगावत की भूमिका थी। लाठी के साथ गोली और गोली के साथ अश्रुगैस का प्रयोग रोज-मर्रा की साधारण घटनायें हो गईं। दर्जनों लोग रोज हताहत होते और हजारों उनका स्थान लेने को तैयार हो जाते। बम्बई शहर का शायद ही कोई कोना बचा होगा, जिसमें गोली न चली होगी। बम्बई शहर में सब ओर यही लिखा दीख पड़ता था—'अंग्रेजो! भारत छोड़ो' और जनता के लिए लिखा होता था—'करो या मरो।" तोड़-फोड़ भी शुरू हो गई। डाकखानों का जलाना, टेलीफोन के तार काटना, रेल की पटरी उखाड़ना साधारण घटनायें हो गईं। कई स्थानों पर अग्निकाण्ड भी हुये। सारे प्रान्त में दो वर्षों में ४० हजार नर-नारी पकड़े गये होंगे। लुक छिप कर काम करने का सूत्रपात यहीं से हुआ। श्री अच्युत पटवर्धन, श्रीमती अरुणा आसफअली, श्री जयप्रकाशनारायण और श्री राममनोहर लोहिया ने अपने साथियों के साथ मिलकर गुप्त आन्दोलन

का श्रीगणेश यहीं से किया था। स्वतन्त्र रेडियो का प्रयोग भी सबसे पहले यहां ही हुआ। बुलैटिनों का तो कहना ही क्या है? दीवारों और सड़कों पर भी बुलैटिन लिखे जाने लगे। व्यापारी, विद्यार्थी, वकील सब इसी रंग में रंग गये।

गुजरात

पटेल-बन्धुओं का गर्वीला गुजरात बारदोली के सत्याग्रह में नाम पैदा कर चुका था। वह इस विद्रोह में पीछे नहीं रह सकता था। व्यापारियों के शहर अहमदाबाद ने गुजरात के नाम की लाज रख ली। विनोद किनारीवाला युवक विद्यार्थी सीने पर गोली खाकर अहमदाबाद का नाम अमर कर गया। टैंकों और मशीन गनों का शहर में प्रदर्शन किया गया। एक-एक दिन में आठ-आठ बार गोलियां चलीं। पर जनता के किले की दीवार में एक छेद तक न हो सका। लाठी चलना तो मामूली बात हो गई। तोड़-फोड़ में बारह सरकारी इमारतें नष्ट-भ्रष्ट हुईं। १६१८ में मालगुजारी देनी बन्द करके जिस खेड़ा जिले ने गुजरात का माथा ऊंचा किया था, वह भी पीछे न रहा। जिले में कई स्थानों पर निहत्थी जनता पर निर्मम गोलीकाण्ड किया गया। सूरत में हड़तालों का जोर रहा। जिले में कई स्थानों पर कई बार गोलियां चलीं। तोड़-फोड़ का भी खूब जोर रहा। भड़ौंच और पंचमहल भी पीछे न रहे।

महाराष्ट्र

छत्रपति शिवाजी का महाराष्ट्र और मध्ययुग में अपने देश के लिए 'महान् राष्ट्र' की कल्पना को मूर्तरूप देने के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने वाले वहां के वीर योद्धा इस युद्ध में पीठ नहीं दिखा सकते थे। सतारा में सर्वथा स्वतंत्र पात्री सरकार की स्थापना करके महाराष्ट्र ने बता दिया कि छत्रपति द्वारा भरी गई भावना एक दम मर नहीं गई है। पूना की शाही नगरी में गोलीकाण्डों की तो बौछार ही आ

९ अगस्त ४२ को शिवाजी पार्क (बम्बई) में खुली बगावत का झण्डा फहराने वाली वीर महिला श्रीमती अरुणा आसफअली।

गई थी। खानदेश में आन्दोलन बहुत उग्र रूप में हुआ। अनेक स्थानों पर गोलीकाण्ड हुये। नन्दूवार में कुछ विद्यार्थियों को गोलीकाण्ड का शिकार बनाया गया।

कर्नाटक

कर्नाटक में प्रदर्शन, जलूस और हड़ताल के साथ साथ तोड़फोड़ भी व्यापक रूप में हुई। दो सौ गांवों में आन्दोलन की लहर फैल गई। प्रान्त में १८ स्थानों पर गोलियां चलीं। पांच को फांसी की सजायें हुईं। हुबली में नरेन बालक और बेलगांव जिले के एक गांव में शोतिया शोतिया नामक कांग्रेसकर्मी पुलिस की गोली के शिकार हुये। कुल १८१ आदमी मरे और ५२० घायल हुये। साढ़े तीन लाख से अधिक सामूहिक जुर्माना हुआ।

युक्तप्रान्त

१८५७ में बगावत का झण्डा लहराने वाला, पराधीनों के बगावत करने के अधिकार को जन्मसिद्ध मानने वाले नेहरूजी को जन्म देकर सारे हिन्दुस्तान को कृतार्थ करने वाला, अहिंसात्मक असहयोग और सत्याग्रह में विशेषतः किसान आन्दोलन में पहल करनेवाला युक्तप्रान्त १९४२ में पीछे रह नहीं सकता था। उसको अपने मुख पर लगे चौरीचौरा-काण्ड के कलंक को भी तो धोना था। बलिया में वहां के स्वर्गीय शेर चित्तू पांडेय के नेतृत्व में स्वराज्य-सरकार की स्थापना करके युक्तप्रान्त ने जो नाम पैदा किया था, उस पर साम्राज्यवाद के मद में चूर मार्श स्मिथ और नीदरसोल सरीखे डायर के भाइयों ने अपने नृशंस अत्याचारों से सोने का मुलम्मा चढ़ा दिया। जनता के रोष व असन्तोष से भयभीत अधिकारियों ने श्री चित्तू पांडे और उनके साथियों को स्वयं जेल से रिहा किया, जेल से बाहर आकर उन्होंने जनता की अपनी सरकार कायम करके अव्यवस्था एवं अराजकता की रोक-थाम की और जनता को लूट-मार, चोरी-डकैती तथा तोड़-

फोड़ के विध्वंसात्मक कार्यों से हटा कर सरकारी अधिकारियों के जीवन तक की रक्षा की और जनता के रामराज्य का एक आदर्श उपस्थित कर दिया। लेकिन, शक्ति के उन्माद में पागल और पाशविकता तथा पैशाचिकता पर उतारू अंग्रेज अधिकारियों ने जिले में चारों ओर अराजकता फैला दी, लूटमार का बाजार गरम कर दिया और अना-चार के लिये स्वेच्छाचार में पली हुई पुलिस व फौज को खुली छुट्टी दे दी गई। बलिया के गांव-गांव में नष्ट की गई झोपड़ियां रोमांचकारी अत्याचारों की कहानियां कह रही हैं। जिले में १५-१६ स्थानों पर गोलियां चलीं और १२१ आदमी उनके शिकार हुये। ३० गांवों में आग लगाकर २१५ घर जला दिये गये। २६ लाख रुपया सामूहिक जुर्माना किया गया। एक हजार आदमी गिरफ्तार किये गये। स्त्रियों के सतीत्व पर भी हमला किया गया।

गाजीपुर में भी जनता की सरकार कायम की गई। यातायात के सारे साधन इस बुरी तरह नष्ट किये गये कि दमन करने के लिये फौजों को गोमती नदी से नावों पर लाया गया। १८५७ के दिनों से भी अधिक बुरी तरह गांवों में लूट-पाट मचाई गई। स्त्रियों के गहने तक छीने गये और उनका सतीत्व भी लूटा गया। २० स्थानों पर हुये गोलीकांडों में १६७ आदमी मारे गये। ७५ गांव अमानुषिक अत्या-चारों के शिकार बनाये गये। साढ़े तीन लाख सामूहिक जुर्माना किया गया। तीन हजार को गिरफ्तार किया गया।

आजमगढ़ जिले में गोरे फौजियों को लूट-पाट और बलात्कार करने की छूट-सी थी। कई गांवों को लूटा गया और स्त्रियों का सतीत्व भी नष्ट किया गया।

बनारस शहर में आन्दोलन का तूफान जब आया, तब सभी सरकारी संस्थाओं पर लोगों ने हमला बोल दिया। जहां-तहां गोलियां चलीं। बीसों आदमी मारे गये। तार व फोन के सब खम्भे उखाड़ दिये गये। रेलवे पटरियां भी नष्ट-भ्रष्ट कर दी गईं। हवाई अड्डे, सड़कें, डाकखाने

और अन्य सरकारी इमारतें भी तोड़-फोड़ का शिकार हुईं। हिन्दू विश्वविद्यालय को फौजी अड्डा बनाने के लिये जबरन् खाली करा लिया गया। लड़कियों का होस्टल भी खाली कराया गया। मार्श और नीदरसोल ने इस जिले के गांवों में भी खून की होली खेली। ४०-५० को फांसी की सजा हुई। १८ मरे और ८८ घायल हुये।

नेहरू-परिवार के इलाहाबाद में जो प्रदर्शन हुये, उनसे सरकारी अधिकारियों के होश गुम हो गये। शहर में अनेक स्थानों पर गोलीकाण्ड हुये। श्री यदुवीरसिंह शहीद हुये। विद्यार्थियों ने आन्दोलन में विशेष भाग लिया।

कानपुर, लखनऊ और आगरा में भी आन्दोलन की आंधी आ गई। कानपुर में मजूरों और लखनऊ तथा आगरा में विद्यार्थियों ने तूफान पैदा कर दिया। सभी शहरों में गोलियां और लाठियां चलीं। आगरा में छापा मार कर पुलिस ने बहुत कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार किया और षड्यन्त्र का मुकदमा चलाया गया।

गढ़वाल और अलमोड़ा की पहाड़ियों में भी हलचल मच गई। प्रान्त का कोई भी जिला और जिले का कोई भी शहर या गांव आन्दोलन की लहर से नहीं बचा।

बिहार

देशरत्न राजेन्द्र बाबू का बिहार प्रान्त, जहां चम्पारन में गांधीजी ने 'सत्य' और 'अहिंसा' का पहिला सफल प्रयोग कर दिखाया था, १९४२ में भी बाजी मार ले गया। सारे प्रान्त में १२२ स्थानों पर गोलीकाण्ड हुए, ९२९० सरकारी अड्डों पर जनता ने धावा किया, १४९० गांव सरकारी अत्याचार के शिकार हुये और ३२-३३ हजार नर-नारी गिरफ्तार किये गये। शहीद होने वालों की संख्या भी कोई दो हजार होगी। ३०-४० लाख सामूहिक जुर्माने में वसूल किये गये और करोड़ों की सम्पत्ति शहरों तथा गांवों में लूटी गई। रेल, तार, डाक, थानों आदि को नष्ट-भ्रष्ट करके सरकारी सत्ता पर कब्जा करने

की प्रान्तव्यापी कोशिशें की गईं। एक हजार डाकखाने लूटे गये। अनेक स्थानों पर जेलों पर भी हमला बोला गया। हजारीबाग जेल से श्री जयप्रकाशनारायण, श्री योगेन्द्र शुक्ल, श्री सूर्यनारायणसिंह, श्री गुलाबचन्द गुप्त और श्री शालिगरामसिंह का भाग निकलना एक ऐतिहासिक घटना थी। श्री जयप्रकाशनारायण द्वारा नैपाल की तराई में जाकर आजाद हिन्द दस्ते का निर्माण किया जाना, वहां गिरफ्तार किये जाने पर इस दस्ते द्वारा रिहा किया जाना और सारे देश का दौरा करके गुप्त आन्दोलन का संगठन करना भी अत्यन्त साहसपूर्ण कार्य था। तोड़फोड़ का इतना जोर रहा कि अरसे तक रेलों का आना-जाना भी बन्द रहा। बिहार महीनों तक सारे देश से अलग-सा रहा। जनता की इस जागृति को कुचलने के लिए टामी, गुरखों, पठानों और जाटों की जो फौजें प्रांत में लाई गईं, उनको अत्याचार और अनाचार करने की पूरी छूट थी। स्त्रियों तक को नंगा करके पीटना, घसीटना और उनके साथ बलात्कार तक करना साधारण घटनायें थी। गांवों के सम्पन्न लोग बुरी तरह लूटे गये। जन-सेवा के सर्वथा निर्दोष ठोस सेवा-कार्य में लगी हुई संस्था चरखा-संघ पर भी हमला किया गया। खादी भण्डारों को लूटा गया और उनमें आग तक लगा दी गई।

पटना में हुए गोलीकांड में पहला हमला विद्यार्थियों पर हुआ। दस विद्यार्थी उसमें शहीद हुए। इस गोलीकांड में अन्तर्राष्ट्रीय विधान से युद्ध के लिए भी वर्जित दमदम गोलियां काम में लाने का उल्लेख किया जाता है। प्रायः सभी सरकारी संस्थाओं पर जनता का कब्जा हो गया। दो-तीन दिन तक जनता का राज्य कायम हो जाने के बाद शहर पर दस हजार टामियों की फौज ने धावा बोल दिया। शहर और जिले के गांवों में भी फौजी हुकूमत हो गई। जिले भर की सरकारी संस्थाओं पर राष्ट्रीय झण्डा फहराने लग गया था। फुलवारी में हुए गोलीकांड में १७ आदमी काम आये। कई स्थानों पर इसी प्रकार कई बलिदान हुए। मुंगेर जिले में भी आन्दोलन इतना व्यापक हुआ कि

२० थानों में से १७ पर जनता का कब्जा हो गया। गांवों में जनता का पंचायती राज कायम हो गया। रेल गाड़ियों, कचहरियों, थानों, डाकखानों आदि सब पर जनता हावी हो गई। कुछ स्थानों पर अमेरिकन फौज भी लाई गईं। हवाई जहाज से भी निहत्थे लोगों पर गोलियां छोड़ी गईं। चम्पारन, शाहाबाद, गया, हजारीबाग, भागलपुर और मुजफ्फरपुर आदि सभी जिलों में तोड़-फोड़ का काम बहुत बड़े पैमाने पर किया गया। मुज्जफ्फरपुर में सरकारी लूट बहुत बड़े पैमाने पर हुई। पुपरी थाने में सेठ लालचन्द मदनगोपाल और सीतामढ़ी में ठाकुर रामनन्दनसिंह के यहां हुई लूटमार बहुत रोमांचकारी थी। रांची, मानभूम, सिंहभूम, पलामू और संथाल परगना के पहाड़ी इलाकों के लोग भी पीछे न रहे।

बङ्गाल

देशबन्धु दास, देशप्रिय सेनगुप्त और देशभक्त सुभाष बाबू के बङ्गाल ने तो उग्र राजनीति और खूनी इन्कलाब को जन्म ही दिया है। वह इस इन्कलाब में पूरी शक्ति के साथ कूद पड़ा। बङ्गाल के दो हजार सुपूत पहिले ही जेलों में बन्द थे। फिर भी प्रांत के कोने-कोने में आंदोलन की लहर व्याप गई। मिदनापुर में जो कुछ हुआ, उससे बङ्गाल के साथ-साथ हिन्दुस्तान के इतिहास में भी कुछ नये गौरवपूर्ण पन्ने लिखे गये। सच्चे अर्थों में ग्रामीण जनता ने आजाद प्रजातन्त्र कायम करके यह दिखा दिया कि अङ्गरेजी हुकूमत के अड्डों की तोड़-फोड़ करने वाले अपना राज कायम करना भी जानते हैं। तामलुक और कंटाई में नमक-सत्याग्रह के भी जबरदस्त केन्द्र कायम थे हुये। तभी से वहां के जननायक जनता का संगठन करने में लगे हुये थे। जापानी आक्रमण का भय जितना इस प्रदेश के लिये था, उतना समूचे बङ्गाल के लिये भी न था। सरकार ने तो इस भय से आशङ्कित होकर घर-फूंक नीति को अपनाया था। लोगों को यहाँ तक अपंगु और असहाय बना दिया गया था कि उनकी साइकिलें और

मछियारों की नावें तक जब्त कर ली थीं। उसका ख्याल था कि ऐसे साधन न रहने पर जापानी आगे न बढ़ सकेंगे। लेकिन, जन-सेवक जापानियों के आने से पैदा होने वाली अव्यवस्था और अराजकता की कल्पना कर उसका सामना करने के लिये स्वयंसेवकों को संगठित कर जनता में स्वावलम्बन और आत्मसंरक्षण की भावना भरने में लगे हुये थे। सम्भवतः सारे हिन्दुस्तान में इन दिनों में महिषादल थाने पर ही यह घटना घटी थी कि सशस्त्र पुलिस ने डिप्टी कमिश्नर के हुक्म पर भी निहत्थी जनता पर गोली छोड़ने से इन्कार कर दिया।

आजाद प्रजातन्त्र का रूप यह था कि प्रत्येक गांव में स्वराज्य पञ्चायतें कायम की गईं। अपनी अदालतें, थाने, जेल व दफ्तर भी खोले गये। विद्युत-वाहिनी सेना का सङ्गठन किया गया, जिसका एक जनरल कमांडिंग अफसर और दूसरा कमांडेण्ट होता था। इसके मुख्य तीन विभाग थे—युद्ध, समाचार और सहायता। सहायता विभाग में डाक्टर, कम्पाउण्डर और सेवा-परिचर्या करने वाले भी शामिल थे। यातायात विभाग भी इस सेना के साथ था। बाद में गुरिल्ला, कानून-व्यवस्था और ट्रान्सपोर्ट के विभाग भी संगठित किये गये। 'केन्द्रीय राष्ट्रीय संघ' की स्थापना का आदर्श सामने रखकर यह योजना बनाई गई थी। श्री सतीशचन्द्र, श्री अजयकुमार मुकर्जी, श्री सतीशचन्द्र साहू और श्री वरदाकान्त कुटी क्रमशः सर्वाधिकारी नियुक्त किये गये। श्री कुटी ने महात्मा जी के आदेश पर आत्म-समर्पण किया था। लोक सेवा के सारे काम, यहां तक कि डाक बांटने का काम भी इसी प्रजातंत्री सरकार की ओर से होता था। तोड़-फोड़ के काम की पराकाष्ठा को पहुँच जाने, सब सरकारी संस्थाओं पर जनता की सरकार का आधिपत्य हो जाने और सरकारी अत्याचार तथा अनाचार के भी चरम सीमा को पार कर जाने पर भी किसी सरकारी आदमी के साथ कोई ज्यादती

नहीं की गई। उनको जेलों में जरूर बन्द किया जाता था और बाद में सुरक्षित घर पहुँचा दिया जाता था।

सरकार की ओर से गोलीकाण्ड, अग्निकाण्ड, लूट-मार आदि का होना तो साधारण बातें थीं; किन्तु जो अनाचार और अष्टाचार हुआ, उसका उदाहरण कहीं और मिलना कठिन अथवा दुर्लभ ही है। गर्भवती स्त्रियों तक के साथ बलात्कार किया गया। अनेकों बलात्कार के कारण मौत का शिकार हो गईं। तामलुक में १२४ घरों को पेट्रोल और मिट्टी का तेल डालकर जलाया गया। १०४४ घर लूटे गये। २७ घर फौज के कब्जे में ले लिये गये। कण्टाई में २२८ महिलाओं पर बलात्कार किया गया। ६६५ घर जलाये गये। २०५६ घर लूटे गये। बैलूरघाट डिवीजनमें लूटमार का बाजार गरम रहा। कई गांव लूटे गये।

अन्य जिलों में आन्दोलन ने इतना जोर नहीं पकड़ा। पर, तोड़-फोड़ का सिलसिला जारी हुआ और सरकार की ओर से दमन भी हुआ। हावड़ा और कलकत्ता शहर में तोड़-फोड़, हड़ताल और प्रदर्शनों का खूब जोर रहा। सरकार ने दमन किया। लाठी, गोली और अश्रु गैस भी काम में लाई गई। टेलिफोन, मोटर, बस, ट्राम आदि को बहुत हानि पहुँचाई गई। फौजी लारियां लूटी गईं। डाकखाने बरबाद किये गये। पुलिस और फौज ने भी शहर में काफी लूटमार की। अंधाधुन्ध गोलियां छोड़ी गईं। कुछ स्थानों पर बम विस्फोट हुये। लेकिन, शहर में बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियां नहीं हुईं।

मध्यप्रान्त-बरार

'अहिंसात्मक असहयोग' के कार्य-क्रम को निश्चित रूप से नागपुर में ही स्वीकार किया गया था। १९२३ में झण्डा सत्याग्रह होकर सामूहिक सत्याग्रह का पहिला सफल परीक्षण नागपुर में ही किया गया था। जनरल आवारी के शस्त्र-सत्याग्रह की रणभूमि भी नागपुर में

ही तय्यार की गई थी। गान्धीजी के वर्धा आ जाने से देश की राष्ट्रीय राजधानी इसी प्रान्त में कायम हुई थी। इसलिये चिमूर-आष्टी के कांडों का यहां होना, हिन्दुस्तान रैड आर्मी का यहां कायम होना और नागपुर पर गवर्नर के शब्दों में जनता की हकूमत का कायम होना कुछ विस्मय-जनक नहीं होना चाहिये। श्री मगनलाल बागड़ी के नेतृत्व में कायम क गई हिन्दुस्तान रैड आर्मी ने प्रांतभर में सरकार के लिये एक आतङ्क पैदा कर दिया था। तोड़-फोड़ का काम बहुत बड़े पैमाने पर और भीषण रूप में हुआ। शहर का आवागमन कई दिन तक बंद रहा। १४ अगस्त को शहर में बात-बात पर गोली चला दी जाती थी। श्री शङ्कर कुनबी को फांसी की सजा हुई। कोई तीन सौ को गोली के घाट उतारा गया होगा। जिले में सभी तहसीलों में आंदोलन का जोर रहा। सरकारी अड्डों पर कब्जा जमाकर भीषण तोड़-फोड़ भी की गई। रामटेक पर फौज ने घेरा डाल लिया।

वर्धा जिले भी आंदोलन का बड़ा जोर रहा। आष्टी में थाने पर झण्डा फहराने की कोशिश में जनता और पुलिस में मुठभेड़ हुई। लाठी व गोलियों की मार लोगों ने खुशी से सहन की। दारोगा के साथ पुलिस के पांच आदमी मारे गये और जनता के भी छः आदमी गोली के घाट उतारे गये। आधी रात में सशस्त्र गोरी फौज ने गांव को आ घेरा। मारपीट और गोलीकांड से आतङ्क पैदा करने के बाद सब लोगों को एक बाड़े में बंद कर दिया गया। एक माह तक उनको उसमें पशुओं की तरह बंद रखा गया। स्त्रियों का सतीत्व भी लूटा गया। छः को फांसी की सजा हुई। आंदोलन होने पर भी दो को फांसी पर लटका ही दिया गया।

इसी प्रकार चांदा जिले के चिमूर गांव में भी अत्याचार और अनाचार इस भीषण रूप में हुआ कि उसके विरोध में प्रो० भंसाली को अपनी जान की बाजी तक लगा देनी पड़ी। नागपञ्चमी के दिन निकाली गई प्रभातफेरी पर चलाई गई गोली के जब बच्चे और स्त्रियां तक

शिकार बनाई गई, तब लोग पुलिस पर टूट पड़े और सरकिल इंस्पैक्टर के साथ पुलिस के पांच आदमी मारे गये। जिला मजिस्ट्रेट २०० गोरी फौज और ३० हिंदुस्तानी फौजी लेकर चिमूर पर जा चढ़े। वयस्क लोगों को गिरफ्तार करके कांजी हाउस में बंद कर दिया गया। फौजियों को खाना खिलाने के लिये लोगों को मजबूर किया गया। गांव में खुली लूट की गई। गोदाम, तिजोरियां और अन्न भण्डार सब लूट लिये गये। टीन की छतें भी उतार ली गई। रजस्वला और गर्भवती स्त्रियों पर भी बलात्कार किया गया। डाक्टर मुंजे ने ऐसी १७ स्त्रियों के बयान लिये थे, जिनमें से १३ पर एक से अधिक गोरों ने एक साथ बलात्कार किया था। दो दिन तक यह अनाचार होता रहा और सात सप्ताहों तक इस प्रकार चिमूर पर घेरा डला रहा कि बाहर की दुनिया को वहां का कुछ भी समाचार नहीं मिला। दो दिन में एक लाख जुर्माना वसूल किया गया। ७९ पर भीषण मुकदमे चलाये गये। कितनों को फांसी की सजा हुई। उनकी रक्षा के लिये देश-व्यापी आंदोलन हुआ। अंग्रेजी राज के दामन पर जो कालिख वहां लगी, वह कभी भी धुल न सकेगी।

महाकौशल में भी तोड़-फोड़ का जोर चारों ही ओर रहा। रेलवे स्टेशन जहां तहां लूटे गये। जबलपुर में गुलाबसिंह और खण्डवा में उदयचंद शहीद हुये। विदर्भ में आंदोलन का खूब जोर रहा। अकोला और अमरावती आंदोलन के केन्द्र थे। समस्त प्रांत में ३९० गोलियों के शिकार हुये, ८२३६ गिरफ्तार किये गये और २१८ हजार जुर्माना किया गया।

अन्य प्रान्त

राजधानी दिल्ली में भी सरकारी इमारतों और टाउन हाल में आग लगाई गई। यहां की पीली कोठी का अग्निकाण्ड दिल्ली के इतिहास में याद रहेगा। जगह जगह पर गोलियां चलीं और दर्जनों आदमी मारे

गये। पहाड़गंज के इलाके में विशेष गोलीकाण्ड हुये। शहर के अनेक डाकखाने लूट लिये गये।

सिन्ध में विद्यार्थियों ने आन्दोलन में विशेष भाग लिया। करांची तथा अन्य शहरों में विद्यार्थियों की ही विशेष हलचल रही।

अजमेर मेरवाड़ा में जनता के आन्दोलन की अपेक्षा सरकारी दमन का जोर अधिक रहा। सब सार्वजनिक संस्थाओं पर सरकार ने अधिकार जमा लिया।

सीमाप्रान्त में खुदाई-खिदमतगारों के कारण आन्दोलन अहिंसात्मक बना रहा। सरकारी इमारतों पर राष्ट्रीय झण्डे फहराये गये। शराब की दुकानों पर धरना दिया गया। लाठियां चलीं। एक दो जगह गोली भी चली। ढाई हजार व्यक्ति गिरफ्तार हुये।

पंजाब में यह आन्दोलन जोर न पकड़ सका। इसका कारण उस समय के प्रधानमन्त्री सर सिकन्दर हयात खां की कूट चालें और प्रान्त में कांग्रेस के संगठन का सुदृढ़ न होना था। अमरशहीद भगतसिंह का प्रान्त इस आन्दोलन में सोया पड़ा रहा।

उड़ीसा में आन्दोलन हुआ जरूर, किन्तु व्यवस्थित रूप में नहीं हुआ। कोरापुर, बालासोर और कटक में अधिक जोर रहा। विद्यार्थियों और स्त्रियों ने भी विशेष उत्साह का परिचय दिया। गोलीकाण्ड के ७६ आदमी शिकार हुये और दो हजार से ऊपर घायल हुये।

आसाम में आन्दोलन का बहुत जोर रहा। अनेक शानदार बलिदान भी हुये, जिन में कौशल कुंअर, कमला मीरी, भोगीराम और कनकलता आदि के नाम सदा याद रहेंगे। जापानी आक्रमण से भयभीत सरकारी अधिकारी जनता की जागृति पर बौखला उठे और अमानुष दमन पर उतर आये। महिलाओं ने भी अपूर्व वीरता का परिचय दिया।

मद्रास प्रान्त में तोड़फोड़ का जोर रहा। सौ स्थानों पर रेल स्टेशन और थाने लूटे गये। तार काटे गये। रेल की पटरियां उखाड़ी गईं। फौजी सामान को बुरी तरह बरबाद किया गया। मदूरा में करफ्यू लागू

किया गया। दमन आतंक की सीमा पार कर अत्याचार में परिणित हो गया।

देसी राज्यों में भी आन्दोलन का फैलना इस संघर्ष की एक विशेषता है। प्रायः सभी राज्यों में जनता के सेवकों और संस्थाओं पर अधिकारियों ने भारी रोष प्रगट किया। गिरफ्तारियों का विशेष जोर रहा।

मर मिटने के दृढ़-संकल्प से किये गये विद्रोह की यह केवल बाहरी रूप-रेखा है। फिर भी देशव्यापी बगावत का इससे कुछ आभास मिल जाता है। लेकिन, हमारे नेता इससे अधिक व्यापक, भीषण और उग्र बगावत की ओर स्पष्ट संकेत कर रहे हैं। आजादी की कीमत तो चुकानी ही होगी। १९४२ के अनुभव को सामने रख कर हमें कुछ अधिक करने का दृढ़ संकल्प सदा बनाये रखना चाहिए।

: ६ :

देशव्यापी बगावत

अहर्निश क्रांति का मन्त्र जपते रहने वाले समाजवादी नेता और तरुण पीढ़ी की भावनाओं के प्रतीक श्री जयप्रकाशनारायण भविष्य की ओर संकेत करते हुए कहते हैं:—

"हमें देशव्यापी बगावत की तैयारी करनी चाहिए। इस बार हमें जेलें नहीं भरनी हैं। हमने इतनी ताकत पैदा करली है कि हम अपने दुश्मनों को गिरफ्तार कर सकें। बगावत का विरोध करने वालों को हमें जेलों में बन्द करना होगा। यदि कहीं सरकार ने विधान परिषद् के निर्णयों को मानने में अड़चनें डालीं, तो देश में इतना भीषण और व्यापक आन्दोलन शुरू करना होगा कि दुनिया की आंखें चुंधिया जायेंगी। प्रधान-मन्त्रियों को तुरन्त ही मजिस्ट्रेटों और पुलिस अफसरों को हुक्म देना होगा कि वे गवर्नरों को गिरफ्तार कर लें। हिन्दुस्तान का विरोध करने वाले अन्य लोगों को भी पकड़ कर जेल में डाल दें। आज से तैयारी शुरू करने पर भी कई मास तैयारी में लग जायंगे। इतनी तैयारी कर लो कि लड़ाई का बिगुल बजते ही आप अंग्रेजी राज को जड़-मूल से नष्ट करने के काम में तुरन्त लग जायं। सब सरकारी दफ्तरों और संस्थाओं पर तुरन्त कब्जा कर लेना होगा। डाकखानों, कचहरियों, खजानों, पुलिस थानों और जेलखानों सभी को अपने अधिकार में ले लेना होगा। फिर जनता का राज कायम करके उन अधि-

कारियों के सहयोग से उसको चलाना होगा, जो उसमें साथ देने को तैयार होंगे। अंग्रेजों को साथ देने वालों को बाहर निकाल देना होगा या गिरफ्तार कर लेना होगा और उनकी जगह नये अधिकारी नियुक्त करने होंगे। नयी सरकार को अपना काम चलाने के लिए नये टैक्स भी लगाने होंगे। नई पुलिस व फौज खड़ी करके उसको नये शस्त्रों से सुसज्जित करना होगा और ये शस्त्र अपने लुहारों से तैयार करवाने होंगे। यह काम कुछ भी कठिन नहीं है, क्योंकि अंग्रेजी सरकार खोखली हो चुकी है। यदि सारे देश में इस बगावत को पैदा किया जा सकता है, तो अंग्रेजों के लिए यहां अधिकार बनाये रखना असम्भव हो जायगा। इस बगावत के साथ देशव्यापी हड़ताल करके अंग्रेज सरकार के काम को असम्भव बना देना होगा। ऐसी बगावत होने पर तीन ही मास में अंग्रेजी सत्ता का देश में से सदा के लिए अन्त हो जायगा।

क्रान्ति जारी रखो

स्वतन्त्रता के पुजारियों के नाम संदेश देते हुए श्री जयप्रकाश-नारायण ने १९४२ की बगावत के दिनों में उसका सिंहावलोकन करते हुए लिखा था—

छः महीने पहले मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि शीघ्र ही भारतीय जनता फिर से क्रांति की ध्वजा फहराती हुई उठ खड़ी होगी; किन्तु ऐसा हुआ नहीं। इसका कारण क्या है? क्या इसका अर्थ यह है कि जनता का जोश कुचल दिया गया? क्या जनता संघर्ष के लिए तैयार नहीं है? मेरे ख्याल में जनता को कमजोर बताना ठीक नहीं। भारत के लोग बरतानवी साम्राज्यवाद से आज जितनी नफरत करते हैं, उतना पहले कभी नहीं करते थे। विदेशी सरकार ने जहां लोगों को कुचलने के हर तरीके से काम लिया था, जनता का जोश ठण्डा होना तो रहा दूर, और भी प्रबल हो उठा। प्रतिशोध की आग सी ग्रामीण भारतीयों के हृदयों में धधक रही है। भले ही विद्यार्थी स्कूलों और कालिजों

में फिर से जाने लगे हैं ; फिर भी समय पर पहले की भांति वे क्रांति का झण्डा बुलन्द कर देंगे, इसमें शक नहीं। मजदूरों की भी यही हालत है। खाद्य-पदार्थ की कमी, जीवन की कठिनाइयां आदि उनको क्रांति की ओर धकेल रही हैं और निश्चय ही, समय आने पर, वे क्रांति में खूब बढ़चढ़ कर हिस्सा लेंगे। पुलिस के कर्मचारियों एवं फौजियों तक में असन्तोष बढ़ रहा है।

इतना सब कुछ होते हुए भी क्रांति का दुबारा विस्फोट क्यों नहीं हुआ ? इसका कारण मनोवैज्ञानिक है।

यह बात सच है कि बरतानवी साम्राज्य की बुनियाद हिल चुकी है। उसकी दीवारें बालू की भित्ति के समान टूटती-बिखरती जा रही हैं। फिर भी जनता को ऐसा कोई आंखों देखा प्रमाण नहीं मिल रहा, जैसे कि सन् ४२ के आरम्भ में। इस कारण भारतीय जनता के मन में भ्रम-सा छाया हुआ है। वह तभी दूर होगा, जब युद्ध की परिस्थिति अंग्रेजों के विरुद्ध रुख अख्तियार करे या कोई ऐसी सुव्यवस्थित क्रान्तिकारी शक्ति दुश्मन पर लगातार वार करती जाए; जिससे बरतानवी साम्राज्य की सैन्य-शक्ति का खोखलापन साफ व्यक्त हो जाए।

अगस्त सन १९४२ में यह मनोवैज्ञानिक वातावरण उपस्थित था। राष्ट्रीय कांग्रेस अपनी सारी शक्ति के साथ जनता का नेतृत्व कर रही थी। यही कारण था कि भारतीय जनता में उत्साह का सागर-सा उमड़ पड़ा और उसने क्रान्ति के नारों से देश के कोने कोने को गुंजा दिया था। आज तो वे ही कांग्रेसी नेता जेलों में बन्द हैं।

युद्ध की परिस्थिति को तो हम सुधार नहीं सकते, किन्तु क्रान्तिकारी नेतृत्व के अभाव को हम दूर कर सकते हैं; उसे हमें दूर करना ही होगा। जनता को कमजोर बताना अकर्मण्यता का दूसरा नाम है। यह संघर्षकारी नेताओं का कर्तव्य है कि जनता में वीरता का संचार करें और उसे क्रान्ति के पथ पर अग्रसर करें।

क्रान्ति के लिए कटिबद्ध सैनिकों का ही यह कर्तव्य है कि वर्तमान

परिस्थिति को सुधारने के लिए आगे बढ़ें। अपना संगठन मजबूत बनावें। शत्रु से लगातार संग्राम जारी रक्खें। वादविवाद का यह समय नहीं है। क्रान्ति-पथ पर आगे बढ़ते चलें। बड़ी से बड़ी कुरबानियां देते न हिचकें। किसी भी कठिनाई का सामना करते न डरें। क्रान्ति के हर तरीके से काम लें। जिसका जैसा विश्वास हो, उसको वैसा ही तरीका अपनाना चाहिए। बस हमें तो लगातार संघर्ष जारी रखना है। विपरीत परिस्थिति से न घबरायें। हताश होना कायरता की निशानी है। कायर और कमजोर लोग यदि कह रहे हैं कि हम हार गए, तो उन्हें कहने दो। उनको हम गद्दार समझकर ठुकरा देंगे और पहले से भी अधिक दृढ़ता के साथ आगे बढ़ते चलेंगे।

व्यर्थ विवाद में न पड़ो

अभी कुछ दिनों से हमारे कतिपय साथी हिंसा और अहिंसा के प्रश्न को लेकर विवाद में पड़े हुए हैं। वर्तमान परिस्थिति में यह वाद-विवाद एक दम निरर्थक है। जिसका जैसा विश्वास है, वैसा ही तरीका अपना ले। इसमें विवाद काहे का ? हमने जिस महामन्त्र की दीक्षा ली है, वह है 'करो या मरो।' तब फिर एक दूसरे को दोष देने की आवश्यकता ही क्या है ? अहिंसात्मक प्रणाली पर विश्वास करने वालों को यह भय है कि हिंसात्मक कार्य करने वाले गांधीजी की प्रतिष्ठा पर कलंक लगा रहे हैं ! लेकिन, यह भय निराधार है। अहिंसा के अचल पुजारी गांधीजी की प्रतिष्ठा पर कलंक लगाना हजारों चर्चिलों व एमरियों के बूते के बाहर की बात है। अंग्रेज राजनीतिज्ञ तो झूठ बोलने से कभी बाज नहीं आ सकते। फिर पर यदि भारत के लोग हिंसात्मक प्रणालियां अपनाने लगे हैं, तो उसके लिए बरतानवी सरकार ही जिम्मेदार है।

एक और बात पर भी वादविवाद हो रहा है और वह यह कि आया वर्तमान संघर्ष कांग्रेस महासभा के आदेश से चल रहा है

या नहीं। कुछ साथियों का यह मत जान पड़ता है कि कांग्रेस के नेता संघर्ष शुरू होने से पहले ही जेलों में बन्द हो गए। इसीलिए वर्तमान क्रान्ति को कांग्रेसी क्रान्ति नहीं कहा जा सकता। विलक्षण बात है। यदि यह बात सही है, तो फिर कांग्रेस के महानतम नेताओं ने बम्बई के अधिवेशन में जो वीरतापूर्ण चिनगारियां बरसाई थीं, वे क्या बिलकुल निरर्थक ही थीं? नेताओं का कैद हो जाना तो संग्राम आरम्भ करने का संकेत ही था। तो फिर अगस्त क्रान्ति को गैर-कांग्रेसी या कांग्रेस से अनधिकृत कहना कैसे ठीक हो सकता है?

कार्यक्रम की बात कुछ और है। कांग्रेस या गान्धीजी को इस बात का समय ही न मिला कि क्रान्ति का सुविस्तृत कार्यक्रम बनावें। नेताओं के कैद होने पर दूसरी ही कांग्रेसी संस्थाओं ने इस कार्यक्रम का ढांचा तैयार किया था। हर प्रकार के अहिंसात्मक तरीकों से काम लेना ही उसका आधारस्तंभ था। परन्तु फिर भी यदि कुछ हिंसात्मक कार्य हो गए तो उस का भी कारण अंग्रेज फासिस्टों एवं उनके गुण्डों का मचाया हुआ हत्याकाण्ड ही था। इस के लिए कार्यक्रम को दोष नहीं दिया जा सकता। उसका आधार तो अहिंसा ही था।

चाहे जो हो, गान्धी जी को इस कार्यक्रम का निर्माता बतलाना एक ऐसा झूठ है, जो अंग्रेज शासकों ही से बोला जा सकता है।

समझौतावादियों से सावधान

इधर कुछ दिन से कुछ ऐसे लक्षण दिखाई दे रहे है, जिनसे उपर्युक्त वादविवादों से भी अधिक हानि पहुंचने की आशंका है। कतिपय हिन्दुस्तानी बंबई प्रस्ताव की कड़ी आलोचना करते रहे हैं। जब कभी कांग्रेस संघर्ष-पथ पर अग्रसर हुई, इन महोदयों ने उसकी नीति की टीका करना प्रारम्भ कर दी। सर्वश्री राजाजी, भूलाभाई देसाई एवं मुन्शी जैसे कुछ नेता, जिनका कि न्यायमुक्त स्थान संघर्षकारियों की श्रेणी में था, स्वतंत्रता-घातक दल के साथ मिल गए हैं। उससे परिस्थिति में
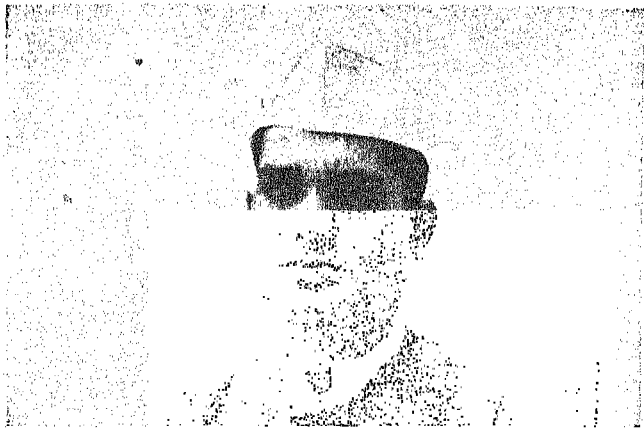
अहोरात्र क्रान्ति का जाप करने वाले तरुण पीढ़ी की भावनाओं के प्रतीक समाजवादी नेता श्री जयप्रकाशनारायण।

कुछ अन्तर नहीं आ सकता। कांग्रेसी जनों को इनकी परवा न करनी चाहिये। परन्तु शोक! हमारे कुछ संघर्षकारी साथी जो जेलों से छूट गए हैं, हतोत्साह से हो गए हैं। वे भी कहने लगे हैं कि "उलझन को सुलझा दो!"

इन कांग्रेसियों का यह काम अनुशासन के विरुद्ध है। बेवफ़ाई है। जब सेनापति मोरचे की अगली कतार में खड़े संग्राम जारी रक्खे हुए हैं, तब समझौता कैसे? अनुशासन की तो परख होती है संग्राम में। समझौता हो या न हो इस बात का तो निर्णय महात्माजी और मौलाना आजाद ही कर सकते हैं। महात्माजी चाहते, तो तत्काल ही आत्म-समर्पण करके इस तथाकथित "अड़चन" को दूर कर सकते थे। किन्तु उन्होंने ऐसा न किया। इसका अर्थ यही हो सकता है कि वे संघर्ष जारी रखना ही पसन्द करते हैं।

कांग्रेस के आगे अब तीन ही रास्ते खुले हैं—या तो अंग्रेजों से अपनी मांगें बलपूर्वक मनवा ले, आत्म समर्पण कर दे अथवा समझौता करले। पहली बात तो यह है कि हमारी सम्पूर्ण विजय होगी। आत्मसमर्पण तो हम कर नहीं सकते। अब रहा समझौता। सन्धि कर लेने से कांग्रेस या राष्ट्र को कैसे लाभ पहुँच सकता है? उसका तो अर्थ होगा कि हम उसी सन् १९३५ वाले विधान को स्वीकार कर लें और निर्लज्जता के साथ फिर से पद ग्रहण करें। प्रान्तिक स्वशासन का नाटक खेलें।

सभी भारतीय स्पष्टतया समझ लें कि सन् ३५ का विधान मर मिट चुका है। अब फिर से उसको जिलाया नहीं जा सकता। यह भी निश्चित बात है कि जिन आततायियों ने भारतीयों का अकथनीय अपमान किया था, जिन लोगों ने भारतीय जनता पर हिंस्र जन्तुओं की भांति घोर अत्याचार किए थे, उनके साथ भारतीय कभी भी मैत्री का व्यवहार नहीं कर सकते। हां, यह बात स्पष्ट रूप से समझ ली जाए। शोषित एवं पीड़ित भारतीयों की प्रतिनिधि संस्था होकर कांग्रेस

कैसे उन विदेशी शासकों के साथ समझौता कर सकती है, जिनका काम शोषण एवं उत्पीडन करना ही है ?

एक और हानि भी कांग्रेस को उठानी पड़ेगी। ज्यूं ही गान्धी जी, राष्ट्रपति आजाद और पण्डित नेहरू जैसे नेता जेलों से छूट जायेंगे, त्यों ही संसार हिंदुस्तान को भूल जायेगा। जब तक संघर्ष जारी रहेगा, तभी तक नेताओं के प्रति बरतानवी साम्राज्यवादियों के मन में भय छाया रहेगा, वरना नहीं। अतएव समझौता करने से भारत को नहीं, किंतु बरतानवी साम्राज्यवादियों ही को लाभ पहुँचेगा। कांग्रेस को तो भारी क्षति पहुँचेगी। संघर्ष जारी रखने ही से हम सफलता प्राप्त कर सकते हैं। अन्यथा नहीं। यह कहना कि राजनीतिक 'अड़चन' जारी रखने से बरतानिया को लाभ पहुँचेगा, ठीक नहीं। जिस 'अड़चन' का अर्थ राष्ट्रीय शक्तियों का बढ़ना हो, जिससे कांग्रेस की शक्ति एवं प्रतिष्ठा की वृद्धि और अंग्रेज शासकवर्ग की प्रतिष्ठा की घटती हो रही हो, उससे अंग्रेज साम्राज्यवादियों का उद्देश्य पूरा होना तो दूर रहा, उनका पराजय होकर रहेगा, इसमें सन्देह नहीं।

राष्ट्रीय सरकार की स्थापना और कांग्रेस-लीग-समझौते के प्रश्न पर भी विवाद छिड़ा हुआ है। यह बात कुछ नई तो नहीं है। फिर भी संघर्ष से थके हुए कुछ कांग्रेसियों में भी वैधानिक-नीति की ओर वापस आने की मनोवृत्ति पायी जाती है और वे कांग्रेस-लीग-समझौते का नारा बुलन्द करने लगे हैं। इसे अंग्रेजों की प्रचार-कुशलता की जीत ही कहना होगा।

अंग्रेज भारत पर अपनी साम्राज्यवादी सत्ता को छोड़नेवाले नहीं हैं। स्वयं स्टैफोर्ड क्रिप्स ने इस बात को स्पष्ट रूप से व्यक्त कर दिया था कि चाहे कांग्रेस और मुसलिम लीग में समझौता हो भी जाये, तो भी भारत को तत्काल स्वतन्त्रता नहीं दी जा सकती। इस पर भी कांग्रेस-लीग-समझौते की बात करना राष्ट्रीयता को कुचलने के लिए बरतानवी साम्राज्यवादियों के आक्रमण का एक अंग ही बन जाता है।

कहा जा सकता है कि कांग्रेस-लीग-समझौते से अंग्रेज भारत में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना करने के लिए लाचार न भी किये जायें, फिर भी उससे स्वातंत्र्य-युद्ध जारी रखने वालों की शक्ति तो बढ़ सकती है। किन्तु जो लोग यह कहते हैं, वे भूल जाते हैं कि मुसलिम लीग ने राष्ट्रीय शक्तियों का कभी साथ नहीं दिया और अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए प्रस्तुत नहीं है। तब फिर उसके साथ समझौता कर लेने से स्वतन्त्रता के संग्रामकारियों की शक्ति कैसे बढ़ सकती है? यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि मुसलिम लीग ने बरतानियाँ के साथ गठ-बन्धन कर लिया है। मि० जिन्ना इस देश के द्रोही हैं। आजकल के वे मीर जाफर हैं। मि० जिन्ना विश्वास का रहे हैं कि वे जो चाहते हैं, वह बरतानिया उन्हें दे देगा। पर उनको अवश्य ही निराश होना पड़ेगा। मुसलमान स्मरण कर लें कि आज बंगाल का शासन करने वाले मीर जाफर के वंशज नहीं, बल्कि क्लाइव के खान-दानी हैं। मि० जिन्ना यदि सचमुच पाकिस्तान चाहते हैं, तो उनको उसके लिए लड़ना होगा। कुरबानियाँ देनी होंगी। प्राण देने के लिए तैयार रहना होगा। लेकिन, न तो मि० जिन्ना, न ही उनका अनुकरण करने वाले, इन बातों के लिए तैयार हैं। यदि जिन्ना साहब अंग्रेजों से लड़कर अपना पाकिस्तान ले लें, तो कांग्रेस को कोई आपत्ति न होगी। किन्तु जिन्ना साहब तो लड़ना चाहते ही नहीं; क्योंकि गद्दारी ही तो लीग की नीति है। शायद आप लोग जानते हैं कि श्री सुभाषचन्द्र बोस ने शोनान में आजाद हिन्द की अस्थाई सरकार स्थापित की है। उन्होंने आजाद हिन्द फौज भी खड़ी की है। ये घटनाएं हमारे लिए महत्त्वपूर्ण हैं।

कुछ लोग, जो स्वयं अंग्रेजों के पिट्ठू हैं, सुभाष बाबू को जापानियों के हाथ का पुतला कहते नहीं सकुचाते। लेकिन, भारत के सभी राष्ट्रीय सैनिक जानते हैं कि वे देश के सच्चे सेवक हैं और स्वतंत्रता के संग्राम में सदा बढ़चढ़ कर हिस्सा लेते रहे हैं। ऐसे स्वतंत्रताप्रेमी नेता के प्रति

यह विचारतक मन में नहीं लाया जाता कि वे देशद्रोही हो सकते हैं। यह बात सच है कि युद्ध के सामान आदि उन्हें धुरीराष्ट्रों से ही मिले हैं। लेकिन, उनकी स्वतन्त्र सरकार एवं फौज के सभी कार्यकर्त्ता भारतीय हैं, जो अंग्रेजों से दिली नफरत करते हैं और भारत को आजाद करने के लिए लालायित हो रहे हैं।

सुभाष बाबू ने दूसरे राष्ट्रों की सहायता लेकर भारत को आजाद करना चाहा, तो उसके लिए उनको देशद्रोही तो नहीं कहा जा सकता और न उनकी राजनीतिक कुशलता पर ही सन्देह किया जा सकता है।

सुभाष बाबू की सरकार और आजाद हिन्द फौज का महत्त्व मानते हुए भी मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूँ कि भारतीय मुख्यतः अपनी ही शक्ति एवं साधनों से स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकते हैं। दूसरों की सहायता के भरोसे बैठे रहना ठीक न होगा।

सुभाष बाबू की सेना तभी हमारे काम आ सकेगी जब हम स्वयं इस बात के लिए तैयार रहेंगे कि हिन्दुस्तान पर बाहर से आक्रमण होते ही हम शासन सत्ता पर अधिकार जमा लें। अन्यथा नहीं।

क्रान्तिकारी सैनिकों को चाहिए कि अपनी सेना को सुसंगठित और सुविस्तृत बना लें। संगठन के बिना कोई भी सेना लड़ नहीं सकती। यद्यपि अहिंसा में गुप्त रूप से काम करना मना है, फिर भी संघर्ष के अवसर पर संगठन ही को अधिक पवित्र मानना होगा। सफलता संगठन ही पर निर्भर करती है। इसलिए हमें गुप्त रूप से अपनी सेना को सुसंगठित कर लेना होगा।

प्रचार का भी महत्व हमें समझ लेना होगा। प्रचार वस्तुतः हमारे संग्राम ही का एक अंग माना जाना चाहिए। हमें देश के विद्यार्थियों में, मजदूरों में, दूकानदारों में, पुलिस में और सिपाहियों में क्रान्ति के सन्देश का प्रचार करना होगा। यही नहीं; बल्कि विदेशों तक में हमें प्रचार का कार्य जारी रखना होगा। कोई ऐसा स्थान न रहे जहां हमारी

आवाज न पहुँच सके। हमारा प्रचार भी ऐसा हो, जिससे अंग्रेजों की शासन-सत्ता का उन्मूलन करने की लोगों को प्रेरणा मिले।

हमें हर तरीके से काम लेकर भारत की जनता को एक महान क्रान्ति के लिए तैयार करना होगा, जो अगस्त क्रान्ति से भी अधिक विस्तृत और सुसंगठित हो। हम जो भी उद्योग करें, वह इसी अपने लक्ष्य की ओर हमें अग्रसर करता चले।

साथियो! "करो या मरो" का महामन्त्र ही मेराभी वैसेही ध्रुवतारा रहा है, जैसे आपका। इसलिए हम "करेंगे या मरेंगे।"

तीर कमान तैयार रखो

वर्तमान स्थिति की चर्चा करते हुये राष्ट्रपति कृपलानी कहते हैं कि—

बरतानवी सरकार का जहां तक सम्बन्ध है, हमारी कठिनाइयों का जल्दी अन्त नहीं हो सकता। हमारी प्रगति के मार्ग में बरतानवी सरकार सदा ही रोड़े अटकाती रहेगी। साम्राज्यवादी का हृदय बड़ा ही कठोर और अनुदार होता है। बरतानवी सरकार की गृह-नीति में परिवर्तन हो सकता है, किन्तु साम्राज्यवादी नीति में परिवर्तन नहीं होता। आम तौर पर यह समझा जाता है कि प्रजातन्त्र और साम्राज्यवाद दुनियां के दो ध्रुवों के समान सर्वथा अलग अलग हैं। लेकिन, हमारे देश में दोनों का समन्वय है। हम पर साम्राज्यवादी प्रजातन्त्र की हकूमत है। इस समय इंग्लैंड में समाजवादी सरकार कायम है। लेकिन, दूसरों के लिए उसका स्वरूप "साम्राज्यवादी समाजवाद" का है। फ्रान्स का भी यही हाल है, जो हिन्दचीन में हमारे पड़ौसी की आजादी की भावना को कुचलने में लगा हुआ है। 'साम्यवाद' या 'समाजवाद' पर यदि साम्राज्यवाद का रंग चढ़ा हुआ है, तो उसका कोई अर्थ ही नहीं है। बरतानवीसरकार की ओर से कदम कदम पर कठिनाइयों का सामना करने के लिए तैयार और सावधान रहना चाहिए। देशवासियों को मैं कहना चाहता हूँ कि सदा ही कमर कस कर तय्यार रहो। तीर कमान तैयार

रखो। अपने बारूद को सील न लगने दो। अपने संगठन को सुदृढ़ रखना होगा। यदि हमारा संगठन ढीला पड़ गया, आजादी के लिए हमारी आकांक्षा धीमी पड़ गई, स्वदेश के लिए हमारा बलिदान कम रह गया, हमारी एकता और अनुशासन में कमजोरी आ गई, तो हम चारों ओर से संकटों से घिर जायेंगे। यदि कहीं अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति अथवा अन्य कारणों से आप आजाद हो भी गए, तो वह आजादी एक दिन के लिये भी किसी काम की न होगी।

: ७ :

हमारी प्रतिज्ञा

रावी के पवित्र तट पर १९२९ की कांग्रेस में युवक-सम्राट पण्डित जवाहरलाल नेहरू के राष्ट्रपतित्व में पूर्ण आजादी की घोषणा करने के बाद से प्रति वर्ष २६ जनवरी को हम आजादी का दिन मना कर 'स्वतन्त्र' एवं 'स्वाधीन' होने की घोषणा करते हैं। इस दिन पढ़े जाने वाले प्रतिज्ञा-पत्र में समय और परिस्थिति के अनुसार कार्य समिति की ओर से परिवर्तन होता रहता है। यहां १९४६ में पढ़ी गई आजादी की प्रतिज्ञा दी जा रही है। १९४७ के लिये उसमें किये गये परिवर्तन की ओर भी संकेत कर दिया गया है:—

"हम विश्वास करते हैं कि स्वतन्त्र रहने, अपने परिश्रम का फल आप भोगने, सुखपूर्वक जीवन बिताने, हर आवश्यकता पूरी कर लेने और विकास के हर अवसर से लाभ उठाने के भारतीयों को भी वैसे ही निर्विवाद स्वयंसिद्ध अधिकार प्राप्त हैं, जैसे दूसरे देशों के लोगों को। हम यह भी विश्वास करते हैं कि यदि कोई सरकार इन अधिकारों से जनता को वंचित रक्खे और जनता का दमन करे, तो जनता को इस बात का हक है कि वह उस सरकार को परिवर्तित या पदच्युत कर दे। भारत में वर्तमान बरतानवी सरकार ने न केवल भारतीयों को उनकी स्वतन्त्रता से वंचित रक्खा है; अपितु जनता के शोषण के आधार पर ही अपने शासन की भित्ति खड़ी की है। बरतानवी सरकार ने भारत का आर्थिक; राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से सत्या-

नाश ही कर दिया । अतएव हम विश्वास करते हैं कि भारत को हर प्रकार से बरतानिया से अपना संबन्ध तोड़ लेना चाहिए और पूर्ण-स्वराज्य प्राप्त कर लेना चाहिए ।

"हम अनुभव करते हैं कि अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करने का सबसे प्रभावयुक्त तरीका अहिंसा ही है। शान्तिपूर्ण एवं न्याय-संगत तरीकों को अपना कर भारत ने शक्ति एवं आत्मविश्वास प्राप्त कर लिया है तथा स्वराज्य के ध्येय की ओर काफी दूर आगे बढ़ चुका है। इन्हीं प्रणालियों को अपना कर हमारा देश स्वतन्त्रता प्राप्त करेगा ।

"हम फिर से शपथ उठाते हैं कि हम भारत को स्वतंत्र करके ही रहेंगे। हम गंभीरता के साथ प्रण करते हैं कि स्वतंत्रता का संग्राम अहिंसात्मक रीति से तब तक लगातार जारी रक्खेंगे, जब तक कि पूर्ण स्वराज्य प्राप्त न हो जाये ।

"हम विश्वास करते हैं कि अहिंसात्मक कार्य, विशेष कर अहिंसात्मक संघर्ष की तैयारी के लिये यह आवश्यक है कि गांधीजी ने देश के सामने जो रचनात्मक कार्यक्रम उपस्थित किया है और जिसे कांग्रेस महासभा ने स्वीकार किया है, उसको सफलतापूर्वक कार्यान्वित किया जाय। खास कर खद्दर का प्रचार करने, साम्प्रदायिक सौमनस्य बढ़ाने और छुआछूत को दूर करने की योजनाओं को कार्यान्वित करना अत्यन्त आवश्यक है। सम्प्रदाय या जाति-पांति का फर्क न मानते हुए, हम अपने देशवासियों में सौमनस्य एवं भ्रातृभाव का प्रचार करने के हर अवसर से लाभ उठायेंगे। जो लोग अबतक समाज की उपेक्षा के पात्र बने हुए हैं, उनको अज्ञान एवं दरिद्रता के गर्त्त से उठा कर ज्ञान और समृद्धि के प्रकाश में लाने की हम जी-जान से चेष्टा करेंगे। जो लोग पिछड़े हुए समझे जाते हैं और दलित हैं, उनके हित के लिये हर प्रकार से प्रयत्न करेंगे। हम जानते हैं कि यद्यपि साम्राज्यवादी शासन-पद्धति का खात्मा करना हमारा लक्ष्य है, परन्तु

फिर भी व्यक्तिगत तौर से किसी भी अंग्रेज़ के साथ, चाहे वह सरकारी अधिकारी हो चाहे न हो, हमारा कोई झगड़ा नहीं। हम जानते हैं कि सवर्ण हिन्दुओं एवं हरिजनों के बीच में किसी तरह का भेदभाव न रहना चाहिए और हिन्दुओं को अपने दिन प्रति-दिन के व्यवहार में किसी भी तरह का भेदभाव न बरतना चाहिए। यद्यपि हम भिन्न-भिन्न धर्मों के अनुयायी हैं, तो भी जहां तक पारस्परिक संबन्ध का ताल्लुक है, हम अपने को भारत माता की सन्तान समझेंगे और एक दूसरे से भाईचारा बरतेंगे। हम यह सदा ध्यान में रक्खेंगे कि सभी भारतीयों की राष्ट्रीयता और आर्थिक एवं राजनीतिक स्वार्थ एकसमान हैं।

"भारत के सात लाख ग्रामों के सुधार के लिए तथा जनता का गला घोंट रही गरीबी को दूर करने के लिए हमारी जो रचनात्मक योजना बनी है, चरखा एवं खादी उसके अविच्छेद्य अंग हैं। अतएव हम अपनी निजी आवश्यकताओं के लिए खद्दर के सिवाय और कोई भी कपड़ा इस्तेमाल न करेंगे और जहां तक संभव हो, ग्राम वालों की हाथ की कारीगरी से तैयार किए हुए सामान ही इस्तेमाल करेंगे। यही नहीं, बल्कि औरों को भी ऐसा ही करने के लिए यथासंभव आग्रह करेंगे। रचनात्मक कार्यक्रम के एक या अनेक अंशों को कार्यान्वित करने की यथासाध्य चेष्टा करेंगे।

"पिछले संघर्ष में हमारे जिन स्वदेशी सहकारियों ने दारुण यातनायें झेली थीं, अपमान सहे थे और अपनी सम्पत्ति एवं प्राणों तक का उत्सर्ग किया था, उनके प्रति हम अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हुए श्रद्धांजलि चढ़ाते हैं। उनके महान बलिदान हमें सदा अपने कर्त्तव्य का स्मरण कराते रहेंगे और हमें प्रेरित करते रहेंगे कि हम जबतक अपने लक्ष्य तक न पहुँच जाएँ, पल भर भी न रुकें, आगे ही बढ़ते चलें।

"८ अगस्त सन् १९४२ को अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति ने जो प्रस्ताव पास किया था, उसका हम फिर से दृढ़तापूर्वक समर्थन करते हैं। परतापयी शासन-सत्ता से भारत छोड़ने की जो मांग उस

प्रस्ताव में की गई है, वह भारत के ही नहीं, अपितु विश्व-शान्ति एवं सबकी स्वतंत्रता के हित को ध्यान में रखते हुए की गई है।"

"आज हम फिर से प्रतिज्ञा करते हैं कि कांग्रेस के सिद्धान्त एवं नीति का सदैव अनुशासन में रहकर अनुसरण करेंगे और भारत के स्वातन्त्र्य-संग्राम को जारी रखने के लिए कांग्रेस की आज्ञा की प्रतीक्षा में सदा तैयार एवं सुसज्जित रहेंगे।"

१९४७ में

सन् १९४७ में स्वतंत्रता की प्रतिज्ञा में केवल इतना ही परिवर्तन किया गया है कि ८ अगस्त सन् १९४२ वाले "भारत छोड़ो" प्रस्ताव का पुनः समर्थन करने की बात हटा दी गई है।

१९४२ के शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए "पिछले संघर्ष में" के स्थान पर "स्वतंत्रता के संग्राम में" कर दिया गया है।

: ८ :

करेंगे या मरेंगे

"अंग्रेजो ! भारत छोड़ो" की मांग को पूरा करने या कराने के लिये महात्मा गान्धी ने १९४२ में "करो या मरो" के महामन्त्र की दीक्षा देते हुये उस समय की बगावत का जो चित्र खींचा था, वह सदा ही हमारे सामने बना रहना चाहिये। इसीलिए हम यहां उन दिनों में लिखे गये गान्धीजी के लेखों और भाषणों के कुछ अंश दे रहे हैं। वेदमन्त्रों और स्मृतिवाक्यों से भी अधिक इनका महत्व है। इनका प्रतिदिन पाठ करते हुये हमें क्रान्ति का लक्ष्य अपने सामने सदा ही उज्ज्वल बनाये रखना चाहिये।

२१ मई, ४२ के 'हरिजन' में गान्धीजी ने लिखा था:—

"हमारी सारी मनुष्यता को चूस लेनेवाली उस भयानक बीमारी से छुटकारा पाने के लिये हमें बड़े-से-बड़ा खतरा झेलना ही चाहिये, जिसके कारण हम यह अनुभव करने लगे हैं कि हमें सदा गुलाम ही बने रहना है। इसे हरगिज बरदाश्त नहीं किया जा सकता। मैं जानता हूँ कि इसका इलाज बहुत महंगा है। लेकिन, मुक्ति या आजादी के लिये जो भी कीमत चुकाई जाय, वह महंगी नहीं है।"

× × ×

७ जून के 'हरिजन' में गान्धीजी ने लिखा था कि—

"मैंने इन्तजार की और बहुत इन्तजार की कि लोगों में विदेशी हुकूमत के जुए को उतार फेंकने के लिये पर्याप्त अहिंसात्मक ताकत पैदा

हो जाय। लेकिन, मेरी मनोदशा अब बदल गई है। अब मैं अनुभव करता हूँ कि मुझे और अधिक इन्तजार नहीं करनी चाहिये। यदि मैंने और इन्तजार की, तो शायद मुझे प्रलय के दिन तक इन्तजार में बैठे रहना पड़ेगा। जिस तैयारी के लिये मैंने प्रार्थना की और प्रयत्न किया, शायद वह कभी पूरी ही न होगी और इसी बीच में आश्चर्य नहीं कि वे लपटें मुझे भी अपने में समेट लें, जो हम सबके लिये खतरा बनी हुई हैं। इसीलिये मैंने यह निश्चय किया है कि वह खतरा उठाकर भी, जो मुझे साफ दीख पड़ता है, मैं गुलामी का मुकाबला करने के लिये लोगों को आह्वान करूं।"

× × ×

"मेरा प्रस्ताव तो यह है कि हिन्दुस्तान को खुदा के हाथों में छोड़ दो। आजकल की भाषा में कहूं, तो उसे अराजकता को सौंप दो। भले ही इस अराजकता से कुछ समय के लिये आपसी लड़ाई-झगड़े शुरू होकर डकैतियाँ ही क्यों न शुरू हो जायं।"

× × ×

"मैं नहीं कहता कि अंग्रेज हिन्दुस्तान को कांग्रेस या हिन्दुओं के हाथों में दे दें। वे उसको परमात्मा के हाथों में या आजकल की भाषा में अराजकता को सौंप दें। भले ही तब, सब पार्टियां कुत्तों की तरह आपस में क्यों न लड़ मरें। अधिक संभव तो यह होगा कि वास्तविक जिम्मेवारी सामने दीख पड़ने पर सब आपस में समझौता कर लेंगी। इसी अराजकता में से, मुझे आशा है, अहिंसा का प्रादुर्भाव होगा।"

× × ×

"इस संघर्ष में हमें कूदना ही है और हमारे राष्ट्र के पास जो कुछ भी है, वह सब हमें इसमें होम देना है।

"सत्ता अपने हाथों में लेने के लिये हमें नहीं लड़ना है, किन्तु विदेशी पराधीनता नष्ट करने के लिये लड़ना है,—उसकी कीमत हमें चाहे कुछ भी क्यों न देनी पड़े?"

× × ×

"अहिंसात्मक स्वरूप का यह सामूहिक संघर्ष होगा और इसमें वह सब कुछ शामिल होगा, जो सामूहिक संघर्ष में होना चाहिये। मैं नहीं चाहता कि इसमें उपद्रव हों। लेकिन, सारी सावधानी रखने पर भी यदि उपद्रव हुये, तो उनका इलाज क्या है ? मैं जेल को निमंत्रण न दूंगा। इस संघर्ष में जेल को निमंत्रण देना शामिल नहीं है। यह तो बहुत ही आसान है। मैं चाहता हूँ कि यह संघर्ष यथासम्भव बहुत ही अल्पकालीन और अत्यन्त प्रभावशाली हो।"

× × +

"अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध हमारा यह निःशस्त्र विद्रोह खुली बगावत ही तो है।"

× × ×

"मैं आन्दोलन को पूरी तरह अहिंसा के साथ चलाने की पूरी सावधानी रखूंगा। यदि मैंने यह अनुभव किया कि बरतानवी सरकार या मित्रराष्ट्रों पर उसका कुछ भी असर नहीं पड़ा, तो मैं अन्तिम सीमा तक जाने में संकोच न करूंगा।"

× × ×

"पीछे हटने या समझौता करने की तो गुंजाइश ही नहीं है। एक और अवसर देने का तो कोई सवाल ही नहीं रहा। यह तो खुली बगावत ही तो है।"

× × ×

"यदि कोई अकेला आदमी शस्त्रास्त्र से लैस डाकुओं के दल का अपनी तलवार से मुकाबला करता है, तो मैं कहूँगा कि वह अहिंसा की लड़ाई लड़ता है। क्या मैंने महिलाओं से यह नहीं कहा कि यदि अपने सतीत्व की रक्षा के लिये वे अपने नाखूनों, दांतों और तलवार तक से काम लेती हैं, तो मैंने उनके इस व्यवहार को अहिंसात्मक ही कहूंगा। उन्हें हिंसा-अहिंसा का कुछ भी पता नहीं है। वे तो सहसा कुछ भी कर बैठती हैं। मान लो कि एक चूहा बिल्ली से बचने के लिये अपने

तीखे दाँतों से काम लेता है, तो क्या तुम उस चूहे को हिंसक कहोगे ? इसी प्रकार पोलैण्ड के जो लोग शस्त्रास्त्र और फौज में अपने से कहीं अधिक बढ़े-चढ़े जर्मन आक्रान्ताओं का सामना कर रहे हैं, वे भी अहिंसात्मक ही हैं।"

× × ×

"मेरी अहिंसा तो लोगों में नहीं है, किन्तु मेरी अहिंसा उनके काम आ सकती है। हमारे चारों ओर अंग्रेजी राज की सुसंगठित और व्यवस्थित अराजकता फैली हुई है। अंग्रेजों के यहां से चले जाने, उनके हमारी बात के न मानने और उनकी सत्ता को मानने से इन्कार करने के हमारे निश्चय से पैदा होने वाली अराजकता इससे अधिक बुरी तो न होगी। जो लोग निःशस्त्र हैं वे भयानक रूप में हिंसा या अराजकता पैदा ही नहीं कर सकते। मेरा तो यह विश्वास है कि उस अराजकता के समुद्र-मंथन से ही विशुद्ध अहिंसा का अमृत हाथ लग सकेगा।"

× × ×

"यह सुव्यवस्थित और सुनियन्त्रित अराजकता तो मिटनी ही चाहिये, भले ही उसके कारण हिन्दुस्तान में अराजकता क्यों न पैदा हो जाय। यह खतरा तो मैं झेल सकता हूं।"

× × ×

"पूर्ण गतिअवरोध तथा हड़ताल आदि के समस्त अहिंसात्मक उपायों से, अहिंसा की सीमा में रह कर, काम लेते हुए हर व्यक्ति को जो कुछ भी संभव होगा, वह सब करने की पूरी छूट होगी। सत्याग्रहियों को सर हथेली पर रख कर मरने के लिए ही सामने आना होगा। उन्हें अपने जीवन के मोह को सर्वथा तिलांजलि दे देनी होगी। कोई भी राष्ट्र तभी जीवित रह सकता है, जबकि उसके निवासी मृत्यु का आह्वान कर उसका आलिंगन करने को तय्यार रहें। हमारा यह अटल प्रण है कि हम करेंगे या मरेंगे।"

× × ×

"तुम में से हर एक को अपने को आज से सर्वथा स्वतन्त्र समझना चाहिये। तुम इस तरह विचरो जैसेकि तुम इस साम्राज्यवाद के पंजे से छुटकारा पा चुके हो। मैं तुमको विश्वास दिलाता हूं कि मुझे वायसराय के साथ मन्त्रि-पदों या ऐसी ही अन्य चीज़ों के लिये कोई समझौता नहीं करना है। मुकम्मिल आजादी से कम किसी भी और चीज से मुझे सन्तोष न होगा। हम करेंगे या मरेंगे। हम स्वदेश को स्वतंत्र करेंगे अथवा उसके लिये प्रयत्न करने में मर मिटेंगे।"

× × ×

: ६ :

भारत आज़ाद होकर रहेगा

अगस्त १९४२ की महान क्रांति के दिनों में अपने देश के महान क्रान्तिकारी नेता श्री सुभाषचन्द्र बोस ने युरोप और पूर्वीय एशिया में आजाद हिन्द के रूप में प्रचण्ड क्रान्ति का सूत्रपात किया था। इस महान अनुष्ठान में उनके नेतृत्व में न केवल जर्मनी और जापान के हाथों युद्ध-बंदी बने हुये फौजी हिन्दुस्तानियों ने, बल्कि वहां रहनेवाले नागरिक हिन्दुस्तानियों ने भी अपना तन-मन-धन सर्वस्व होम दिया था। अंग्रेजी हुकूमत का हिन्दुस्तान में से खात्मा करने के लिये युरोप और पूर्वीय एशिया के हिन्दुस्तानियों ने भी "करो या मरो" के महामन्त्र की दीक्षा ली थी। विपरीत परिस्थितियां पैदा हो जाने पर नेताजी ने जो अमर सन्देश दिये थे, उन्हें यहां दिया जा रहा है।

(१)

अमर बलिदान

१६ अगस्त १९४५ को हथियार डालने से पहिले आज़ाद हिन्द फौज के नाम आपने यह अन्तिम आदेश जारी किया था:—

"साथियो !

अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता के संग्राम में हमें अब एक ऐसी विषम परिस्थिति का सामना करना पड़ा है, जिसकी हमें स्वप्न में भी आशंका न थी। लेकिन, यह न समझना कि हम हिन्दुस्तान को आज़ाद करने के अपने उद्देश्य में असफल हो गए हैं। यह

युद्ध की घोषणा

"करो या मरो" के महामन्त्र की दीक्षा देकर पूर्वीय एशिया के तीस लाख हिन्दुस्तानियों को लड़ाई के मैदान में खड़ा कर देने वाले नेताजी श्री सुभाषचन्द्र बोस २३ अक्तूबर १९४३ को आजाद हिन्द सरकार की ओर से उसके अध्यक्ष और प्रधान सेनापति की हैसियत से इंग्लैंड और अमेरिका के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर रहे हैं।

बात सच है कि हमें हथियार डालने पड़ गए। फिर भी मैं तुम्हें आश्वासन देता हूँ कि हमारी यह असफलता अस्थायी ही है। अब तक हम जो महान कार्य कर चुके हैं, उसका प्रभाव इस असफलता के कारण कभी भी मिट नहीं सकता। हिन्द-बर्मा की सीमा पर और हिन्दुस्तान के भीतर जो कुछ हुआ, उसमें तुममें से कितने ही बहादुरों ने शानदार हिस्सा लिया। उन्होंने कठिनाइयों व मुसीबतों का सामना किया। हर तरह की तकलीफ़ें झेलीं। यहां तक कि तुम्हारे कितने ही वीर साथियों ने युद्ध की वेदी पर प्राणों की भेंट चढ़ा दी और स्वतंत्र भारत के अमर शहीद बन गए। इतना प्रकाशमान उत्सर्ग निष्फल हो नहीं सकता।

साथियो! इस संकटभरी घड़ी में तुम से मेरा एक ही अनुरोध है। याद रक्खो, तुम क्रान्तिकारी सेना के वीर सैनिक हो। इसलिये तुम्हें सदा उस संयम, अनुशासन, शान एवं शक्ति के साथ व्यवहार करना होगा, जो किसी भी क्रान्तिकारी फ़ौजी को शोभा दे। समर भूमि में तुम अपना जौहर दिखला चुके हो। आत्म-बलिदान का भी ज्वलन्त उदाहरण प्रस्तुत कर चुके हो। अब तुम्हें अपने दृढ़ संकल्प का, आत्म-विश्वास का, अदम्य उत्साह एवं बलवती आशा का परिचय देना होगा। तुम्हें यह दिखलाना होगा कि अस्थायी असफलता के कारण तुम हताश नहीं हुए हो। मैं जानता हूँ कि तुम किस धातु के बने हो। अतएव मुझे तनिक भी सन्देह नहीं कि चाहे जो हो, इस संकट की घड़ी में भी तुम छाती तानकर अविचलित भाव से खड़े रहोगे और अदम्य विश्वास एवं आशा के साथ भविष्य का सामना करोगे।

इस नाज़ुक घड़ी में हिन्दुस्तान के चालीस करोड़ लोगों की आंखें हमारी तरफ देख रही हैं। उन आंखों में करुणा के साथ आशा भी है। उनमें विश्वास की झलक है। भारत के लोग अपनी आज़ाद हिंद फौज को श्रद्धा के साथ देख रहे हैं। इसलिए हिन्दुस्तान के सच्चे सेवक बने रहना तुम्हारा कर्तव्य है। भारत का भविष्य उज्ज्वल होगा। इस पर अटल विश्वास रखो। दिल्ली के रास्ते एक नहीं, अनेक हैं और

हमारा अन्तिम ध्येय दिल्ली पहुँचना है। तुमने और तुम्हारे अमर साथियों ने जो बलिदान किए हैं, वे अवश्य ही अपने उद्देश्य में सफल होकर रहेंगे।

संसार की कोई भी शक्ति हिन्दुस्तान को गुलाम नहीं रख सकती। हिन्दुस्तान जरूर आजाद होगा और वह भी शीघ्र ही।—जयहिन्द।"

(२)

उज्ज्वल भविष्य

पूर्वीय एशिया के निवासी भारतीयों के नाम उसी दिन १६ अगस्त १९४५ को आपने निम्न संदेश जारी किया था:—

"बहनो और भाइयो !

"भारत की आजादी की लड़ाई के इतिहास का एक उज्ज्वल अध्याय अब पूरा हो गया। इस अध्याय में पूर्वीय एशिया के भारत के सपूतों व सुपुत्रियों के नाम अमर स्थान प्राप्त करेंगे।

भारत की लड़ाई के लिए तुम लोगों ने अपने तन, मन, धन और सर्वस्व की अविरल धारा-सी बहा दी और देशभक्ति एवं आत्मोत्सर्ग का ज्वलन्त उदाहरण उपस्थित कर दिया। सम्पूर्ण यौद्धिक तैयारी के लिये मैंने तुम्हारा आह्वान किया था, तो तुम लोग जिस उत्साह के साथ, अपनी इच्छा से, उसको कार्यान्वित करने के लिए आगे बढ़े थे, उसे मैं कभी न भूलूंगा। तुमने अपने बेटे-बेटियों को आजाद हिंद फौज एवं झांसी रानी रेजीमेंट में भरती होने के लिए हजारों की संख्या में भेजा। स्वतंत्र भारत की अस्थायी सरकार के कोश में धन और सामान की वर्षा-सी कर दी और उसका खजाना अटूट बना दिया। संक्षेप में, भारत माता के सच्चे सपूतों का-सा कर्तव्य तुमने निभाया। परन्तु शोक! तुम्हारी ये सब सेवायें, ये सब कुरबानियां, फलदायिनी न हुईं। इस बात का मुझे तुमसे अधिक शोक है। लेकिन, तुम्हारे बलिदान निष्फल नहीं गए; क्योंकि भारत का स्वतंत्र होना उन्हीं के कारण सुनिश्चित हो गया

है। संसारभर में जहां कहीं भी हिन्दुस्तानी होंगे, तुम्हारी वीर गाथा उनमें अमर स्फूर्ति की बिजली दौड़ाती रहेगी। भविष्य में भारत तुम्हारा स्मरण करके श्रद्धांजलि चढ़ाया करेगा। तुम्हारे बलिदानों, आजादी के लिए तुम्हारे उद्योगों तथा तुम्हारी महत्वपूर्ण सफलताओं पर आनेवाली पीढ़ियों को गर्व एवं अभिमान होगा।

जिस विषम परिस्थिति का आज हमें सामना करना पड़ा है, विश्व-इतिहास में वह बेमिसाल है। इस नाजुक घड़ी में मुझे केवल एक ही बात कहनी है। हताश न होओ। हमारी असफलता अस्थायी है—क्षणिक है। उदास न होओ। उत्साह एवं हर्ष के साथ उन्नत-मस्तक बने रहो। इस विश्वास पर अटल रहो कि हिन्दुस्तान का भविष्य उज्ज्वल है। किसी भी सत्ता में इतनी शक्ति नहीं है कि भारत को गुलाम रख सके। भारत आजाद होगा और शीघ्र ही आजाद होगा।—जयहिंद।"

: १० :

विदेशों में बगावत की लहर

दीन, हीन और पददलित जनता को सभी युगों और सभी देशों में समय समय पर अपने अधिकारों के लिये ही नहीं, बल्कि अपने अस्तित्व तकके लिये बगावत का झण्डा फहराना पड़ा है। जनता की जागृति का इतिहास सदा ही सब देशों में उसी 'इन्कलाब' और 'बगावत' के शब्दों में लिखा गया है, जिसमें से हमें गुजरना पड़ रहा है। यहां हम ऐसे ही कुछ देशों की जन-जागृति की हलकी-सी झांकी दे रहे हैं।

(१)

इंग्लैण्ड में

हिन्दुस्तान को अपने फौलादी पंजे में दबोच रखने वाले इंग्लैण्ड में साम्राज्यवाद, प्रजातंत्र और एकतंत्र का विचित्र-सा सम्मिश्रण है। अपने आधीन देशों के लिये वह साम्राज्यवादी है और अपनी प्रजा के लिये प्रजातन्त्री। राजा का पद केवल शोभा की चीज है, जिसके नाम पर और जिसकी धुरी पर शासन का चक्र चलता, घूमता और फिरता है। प्रजा ने राजवंश को अजायबघर की चीज बना कर अपने लिये जिस आदर्श प्रजातन्त्र को प्राप्त किया है, वह सात-आठ सौ वर्षों के संघर्ष का परिणाम है। जैसे वहां की प्रजा ने कभी राजा जान और चार्ल्स को अपनी मांग को मानने के लिये मजबूर करके बिचारे चार्ल्स को तो ३० जनवरी १६४९ को व्हाइट पैलेस में फांसी पर लटका दिया

था, वैसे ही उसने १६२६ में अपने बादशाह को यह कह कर गद्दी से उतरने को लाचार किया था कि "यदि तुमको अपनी पत्नी चुनने का अधिकार है, तो हमें अपनी महारानी चुनने का अधिकार है और हमारा अधिकार तुम्हारे अधिकार से कहीं अधिक बड़ा है।" इंग्लैण्ड में राज-पद की स्थापना नार्मनैन के आक्रमणों से अपनी रक्षा करने के लिये सामन्तों (लार्डों) ने मिल कर की थी। उसी समय यह तय हो गया था कि "कोई भी राजा कानूनों में स्वेच्छा से कुछ भी परिवर्तन नहीं कर सकेगा। उसको अपनी प्रजा के जीवन एवं सम्पत्ति और देश की व्यवस्था की रक्षा करने के लिये नियुक्त किया जाता है। इसी उद्देश्य से प्रजा ने उसके हाथों में शासन की सत्ता सौंपी है। इसके अलावा किसी अन्य सत्ता के लिये वह दावा नहीं कर सकता।" इस प्रकार राजा को प्रजा पर अपनी इच्छा थोपने से रोक दिया गया था। जान, हेनरी और चार्ल्स सरीखे राजाओं ने अपनी स्वेच्छाचारिता से काम लिया और प्रजा में रोष व असन्तोष की आग भभक उठी। १२१५ में बादशाह जान को प्रजा के विद्रोह के सामने सिर झुकाना पड़ गया और प्रजा के सुप्रसिद्ध अधिकार-पत्र "मैगना चार्टा" पर हस्ताक्षर करने को विवश होना पड़ा। इसमें उसने स्वीकार किया था कि राजा प्रजा पर कोई टैक्स न लगा सकेगा, उससे जबरन आर्थिक सहायता न ले सकेगा, किसी से बेगार नहीं ले सकेगा और किसी को मुकदमा चलाये बिना सजा न दी जा सकेगी।

चार्ल्स प्रथम स्वेच्छाचार पर उतर पड़ा। उसने अपने को ईश्वर का अंश बना कर, उसका प्रतिनिधि मान कर, मनमानी शुरू कर दी। प्रजा ने इसे स्वीकार नहीं किया और संघर्षमय स्थिति पैदा हो गई। लेकिन, राजा को प्रजा के सामने झुकना पड़ गया और प्रजा के अधिकार-पत्र पर हस्ताक्षर करने को उसे लाचार होना पड़ा। प्रजा से किसी भी काम के लिये धन वसूल करने, लोगों को कैद करने तथा जबरन फौज में भरती करने और फौजी कानून जारी करने का अधिकार राजा से छीन लिया

गया। १६२८ का यह 'मैगना चार्टा' भी इंग्लैण्ड के इतिहासका सुनहरी पन्ना है। कुछ ही समय बाद चार्ल्स ने फिर से पार्लमेण्ट की अवहेलना करनी शुरू कर दी और अन्त में ३० जनवरी १६४९ को चार्लस को व्हाइट हाल में राष्ट्रद्रोह के अपराध में फांसी की सजा दे दी गई। १६७९ में हैबियस कार्पस एक्ट और १६८८ में अन्य कानून बना कर राजा के अधिकार और भी कम कर दिये गये। प्रजा के सामने राजा को निरन्तर झुकने को लाचार होना पड़ा और आज स्थिति यह है कि वह अपनी फांसी के वारण्ट पर हस्ताक्षर करने से भी इन्कार नहीं कर सकता और स्वेच्छा से अपनी पत्नी तक का चुनाव नहीं कर सकता। प्रजा की खुली बगावत की वेगवती लहर के सामने उसका अस्तित्व एक हलके से तिनके के समान रह गया है।

(२)

अमेरिका में

इंग्लैण्ड के जिन लोगों ने अमेरिका जा कर वहां के लाल हबशियों का दमन करके वहां स्वदेश का उपनिवेश कायम किया था, उन्होंने ही वहां बगावत का लाल झण्डा फहरा कर "करबन्दी" का नारा बुलन्द किया था। इंग्लैण्ड की पार्लमेण्ट में ही अमेरिका के लिये कानून बनते थे और उन कानूनों से अमेरिकनों पर नये नये टैक्स भी लगाये जाते थे। स्टैम्प एक्ट को लेकर अमेरिका के गोरों में विद्रोह पैदा हुआ और उन्होंने ऐलान कर दिया कि वे उस पार्लमेण्ट का कानून नहीं मानेंगे, जिसमें उनके प्रतिनिधि नहीं हैं। उनका नारा था—"प्रतिनिधित्व के बिना टैक्स नहीं दिये जायेंगे।" अलैकजैण्डर, हैमिल्टन और टाम पाइन सरीखे लोग इस विद्रोह के नेता थे। उन्होंने इंग्लैण्ड से नाता तोड़ने और सर्वथा स्वतन्त्र हो जाने की घोषणा की। उन्होंने पुस्तिकायें, विज्ञप्तियां और पोस्टर निकाल कर इस बारे में देशव्यापी प्रचार किया। टाम पाइन ने कहा

कि "ओ मानव के साथ प्यार करने वालो ! तुम केवल अत्याचार के ही नहीं, बल्कि अत्याचारी के भी विरोध में छाती तान कर खड़े हो जाओ । पुराना संसार दमन व अत्याचार का शिकार हो रहा है और चारों ओर आजादी की पुकार मची हुई है ।"

इस आन्दोलन से अमेरिका में चारों ओर आग सुलग गई। इंग्लैण्ड की ढिलमिल नीति ने उसमें घी का काम किया। ४ जून १७७६ को फिलेडाल्फिया में सब राज्यों के अधिकृत प्रतिनिधि इकट्ठे हुये और उन्होंने आजादी का घोषणा-पत्र तय्यार किया। उस घोषणा पत्र के साथ आज का दिन भी अमेरिका के इतिहास में अमर हो गया। उपनिवेशों को अपने आधीन रखने की इंग्लैण्ड की दुर्नीति पर अमेरिका की इस क्रान्ति से घातक चोट लगी। अमेरिका स्वतन्त्र हो गया और उसने अन्य उपनिवेशों की स्वतंत्रता का मार्ग भी प्रशस्त बना दिया।

उसी के बाद महान अमेरिकन अब्राहम लिंकन ने यह घोषणा की थी कि "हमारे पूर्वजों ने ८७ वर्ष पहिले इस महाद्वीप पर एक नये राष्ट्र का निर्माण किया था। आजादी के गर्भ में से उसका जन्म हुआ था और उसने यह एलान किया था कि सभी मानव समान हैं। इस समय हम एक बड़े घरेलू युद्ध में उलझे हुये हैं। इसमें इस बात की परीक्षा हो रही है कि इस प्रकार जिस राष्ट्र का निर्माण हुआ या होता है, क्या वह जीवित भी रह सकता है ? यह हम लोगों की जिम्मेदारी है कि हम अपने पूर्वजों के अधूरे काम को पूरा करने में अपने को लगा कर यह सिद्ध कर दें कि हमारे राष्ट्र के सिर पर परमात्मा का हाथ है। यह आजादी के गर्भ में से एक बार फिर नया जन्म लेगा और 'जनता की जनता द्वारा स्थापित एवं संचालित सरकार का संसार में से कभी भी नाश न होगा।"

अमेरिका आज भी इसी क्रान्ति का सुख भोग रहा है और गर्व के साथ माथा ऊंचा उठाये हुये यह कह रहा है कि आज के संसार में सबसे पहिले उसी ने आजादी का झण्डा फहराया था।

(३)

फ्रांस में

हे फ्रांस के सिपाहियो, मजदूरो और किसानो !
वह देखो पौ फटी है, बहादुरो जवानो !

अब शान का, अब आन का प्रभात निकल आया है ।
अब देश के आकाश पर इनक़लाबी छाया है ॥

अब परचमे-सैयाद भी वह देखो झुकता जा रहा ।
और इनक़लाबी बाढ़ में वह देखो बहता जा रहा ॥

अब इनक़लाबी बिगुल की आवाज़ पर ईमान है ।
अब जंग का मैदान ही तो शान का मैदान है ॥

अब चारों ओर ज़ालिमों का जी घबराता जा रहा ।
और इनक़लाबी गूँज से वह लूई थर्राता जा रहा ॥

और इनक़लाबी नौजवान इक अजब अन्दाज़ो-नाज़ से ।
हैं कूच करते आ रहे वह इनक़लाबी साज़ से ॥

गर मर गये तो क्या हुआ ? तुम नाम करके जाओगे ।
गर ख़ुद नहीं, औलाद को आज़ाद करके जाओगे ॥

अब तौल लो, बन्दूक से और तीर से तलवार से ।
दहला जाए दुश्मन तेरे पाँवों की झँकार से ॥

यह शान का, यह आन का, यह मान का दिन आ गया ।
और इनक़लाबी जोश से तू जीतता बढ़ता ही जा ॥

अब जोश से आगे बढ़ो, बढ़ते चलो जवानो ।
ओ फ्रांस के बहादुरो, मजदूरो और किसानो !!

अठारहवीं सदी के अन्तिम चरण में 'लेस मारसेलीस' के नाम से विख्यात इस राष्ट्रीय इन्कलाबी गान से फ्रांस का कोना कोना गूँज उठा । सन् १७९२ का समय था । फ्रांस के सिंहासन पर अत्याचारी लुई १६ वाँ सम्राट बन कर बैठा था । राजघराने के और सामन्तों-रईसों

के घरों के कुत्तों तक को तरह-तरह के मांस एवं स्वादिष्ट पदार्थ खाने को मिल जाते थे, जब कि श्रमिक एवं कृषक जनता दाने-दाने को मोहताज हो रही थी। लोग भूख से तड़प रहे थे। ऊपर से उन पर घोर अपमान और अत्याचार भी लादे जा रहे थे, जिनको सहन करते-करते जनता तंग आ गई। आखिर सहनशीलता की भी तो कोई सीमा थी!

फ्रांस की, विशेषकर राजधानी पैरिस की, श्रमिक जनता विप्लव की ध्वजा फहराती हुई अत्याचारियों पर टूट पड़ी। क्रान्ति की बाढ़ इस प्रबल वेग से बह चली कि न केवल सम्राट् और उसके घराने के लोग, अपितु प्रथम क्रान्ति के अभिनेता रारपवेरी जैसे लोग भी बह चले। अत्याचारी राजवंश का चिह्न तक न रहा। शासन-सत्ता जनता के हाथों में आ गई। तब फिरके फ्रांसीसी जनता प्रतिनिधियों की एक सभा हुई। इसी सभा में "मनुष्य के अधिकार" नाम का ऐतिहासिक पत्र बनकर तैयार हुआ और उसकी घोषणा भी की गई, जो इस प्रकार है:—

"मनुष्य के अधिकारों की अनभिज्ञता और उपेक्षा ही के कारण राज्यों के शासक कुशासन करनेपर उतारू होजाते हैं। इसी कारण राज्यों का सर्वनाश होता है। अतएव इस विधान परिषद् ने यह आवश्यक समझा है कि मानव के निम्न अधिकारों को स्वीकार किया जाय:—

१—सभी मनुष्य स्वतन्त्र रहने का जन्मसिद्ध अधिकार रखते हैं। सबके एक समान अधिकार हैं।

२—राज्य के विधान का उद्देश्य प्रजा के स्वभावसिद्ध अधिकारों की रक्षा करना है। और वे हैं—स्वतन्त्रता, सुरक्षा और अत्याचार का प्रतिरोध।

३—प्रजा ही देश का शासन करेगी। किसी संस्था, संघ या व्यक्ति को कोई ऐसा अधिकार प्राप्त न होगा, जिसके लिये सारे राष्ट्र की सम्मति प्राप्त न हो।

४—आजादी का तात्पर्य है उन सब कार्यों को करने की आजादी, जिनसे दूसरोंको हानि न पहुँचे।

५—कानून उन्हीं कार्यों का निषेध कर सकता है, जिनसे राष्ट्र या समाज को हानि पहुँचने की आशंका हो। जो काम निषिद्ध नहीं, उन्हें करने का सबको अधिकार है। कानून के विरुद्ध कार्य करने पर कोई भी किसी को बाध्य नहीं कर सकता।

६—कानून सबकी सम्मति से बनता है। इसलिए राष्ट्र का प्रत्येक व्यक्ति स्वयं या अपने प्रतिनिधियों द्वारा कानून के बनाने में भाग ले सकता है। सबकी सम्मति से बने कानून के सामने सभी मानवों का समान दरजा होगा। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी शक्ति एवं योग्यता के बल पर राज्य का ऊँचे-से-ऊँचा पद या गौरव पाने का अधिकार होगा।

७—कानून की अनुमति के बिना किसी भी व्यक्ति को कैद नहीं किया जायगा।

८—जब तक कानून के मुताबिक कोई दोषी सिद्ध न हो जाय, तब तक उसको निर्दोष ही समझा जायेगा।

९—अपना मत प्रकट करने के कारण किसी को तकलीफ नहीं दी जानी चाहिए। धर्म की भी आलोचना की जा सकती है; बशर्ते कि उससे सार्वजनिक शान्ति में विघ्न न पड़े।

१०—आजादी के साथ विचार-विनिमय करने का अधिकार मनुष्य का सबसे मूल्यवान् अधिकार है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचार लिख या बोल कर व्यक्त करने की आजादी होगी। यदि किसी ने इस आजादी का दुरुपयोग किया, तो उसके लिए कानून के आगे वह उत्तरदायी होगा।

११—इन अधिकारों की रक्षा के लिए फौज की आवश्यकता होगी। लेकिन, यह फौज अपने कतिपय नायकों ही की नहीं, बल्कि सबकी भलाई के लिये रक्खी जायेगी।

१२—राष्ट्र का प्रत्येक व्यक्ति अपनी शक्ति के अनुसार इस फौज के खर्च के लिए कर दिया करेगा।

१३—ऐसे करों के लगाने, लेने या जांच करने का अधिकार प्रजा जनों को होगा।

१४—प्रत्येक राजकीय कर्मचारी के कार्यों का निरीक्षण करने का सारे राष्ट्र या समाज को समान अधिकार होगा।

१५—अपनी कमाई पर प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार होगा। जब तक किसी राष्ट्रीय काम के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यकता न पड़ जाये, किसी की व्यक्तिगत सम्पत्ति छीनी नहीं जा सकती। ऐसी परिस्थिति में भी सम्पत्ति के मालिक को उचित मुआवजा दिया जाना चाहिए।

फ्रांस की इस सफल क्रान्ति से "क्रान्ति, चिरजीवी हो!" का नारा सारे संसार में गूंज गया।

(४)

रूस में

"संसारभर के श्रमिको! एक हो जाओ!" इस नारे से संसार के पूंजीपतियों के हृदय को दहलाते हुए महान् क्रान्तिकारी नेता लेनिन ने रूसी जनता में नये प्राण फूंक दिये। वे क्रान्ति, समाजवाद और वर्ग-युद्ध का नारा केवल बुलन्द ही न करते थे, बल्कि अपने सिद्धान्तों को कार्यरूप में परिणत करने के लिए तड़प रहे थे। इसी तड़पन के साथ वे स्वयं क्रान्ति की ज्वाला में कूद पड़े और रूस के पिछड़े हुए लोगों को भी क्रान्तिकारी सेना में परिवर्तित कर दिया। उनके नेतृत्व का ही यह फल था कि रूस में सम्राट जार के अत्याचारी शासन का ही केवल अन्त न हुआ, बल्कि रूसी समाज की भी काया-पलट हो गई।

अपने सिद्धान्तों पर अटल विश्वास रखते हुए क्रान्तिकारी लेनिन सैण्टपीटर्सबर्ग में स्थित "समाजवादी-प्रजातंत्र दल" ("सोशल डिमाक्रेटिक पार्टी") का संचालन करते रहे। सम्राट जार का सिंहासन डोल ही चुका था। सन् १९०५ में हुई प्रथम क्रांति में ही उसकी नींव हिल गई थी। फिर भी, जारशाही का दीपक

अभी हिचकिचा रहा था। एक दम झुक नहीं सका। ज़ार के सैनिकों ने अपने ही भाई-बहनों पर पशुता का व्यवहार किया और निहत्थों पर तलवार एवं संगीन का वार किया। पीटर्सबर्ग शहर की सड़कें निर्दोष रूसी जनता के गरम रुधिर से रंजित हो गईं।

अगले दिन लेनिन के आदेशानुसार 'सोशल डिमाक्रेटिक पार्टी' के बोलशेविक दल ने यह विज्ञप्ति प्रकाशित की:—

"नागरिको! एकाधिपत्य-शासन की बर्बरता का दृश्य आपने देखा। सड़कों पर रक्त की नदियां बहती देखीं। क्या यह आप जानते हैं कि किसके हुक्म से यह हत्याकांड हुआ? किसके हुक्म से श्रमिकों पर संगीनें चलाई गईं? ज़ार के हुक्म से। ग्रैण्ड-ड्यूकों, मन्त्रियों और दूसरे शाही चाटुकारों के हुक्म से। सभी हत्यारे हैं। निर्दोषों के खून के प्यासे पशु हैं। साथियो! टूट पड़ो हथियारों पर, गोला-बारूद के गोदामों पर। हथियार के भण्डारों और कारखानों पर अधिकार कर लो। पुलिस के थानों को मटियामेट कर दो। फौजी दफ्तरों पर छा जाओ। उन सब इमारतों की धज्जियां उड़ा दो। ज़ारशाही का अन्त कर देना होगा। उसकी जगह अपना—प्रजा का—शासन स्थापित करना होगा। जनता के प्रतिनिधियों की विधान-परिषद् चिरंजीवी रहे! इन्कलाब ज़िन्दाबाद!"

सन् १९०५ की रूसी क्रान्ति विफल हो गई। फिर भी लेनिन विचलित न हुए। हताश न हुए। लगातार क्रांति की तैयारी में लगे रहे। इन्हीं दिनों लेनिन ने यह घोषणा की थी—

"पूंजीपतियों के हाथों से श्रमिक-जनता यदि राज्य-सत्ता छीनना चाहे, तो वह हिंसात्मक क्रांति ही के द्वारा साध्य हो सकता है।"

सन् १९१७ में ऐसी ही हिंसात्मक क्रांति हुई, जिसके फलस्वरूप पूंजीवाद का रूस में एक बारगी अन्त होकर सारे संसार के दीन, हीन और पददलित लोगों में नयी आशा का संचार हो गया।

(९)
तुर्की में

"हमें अपने देश को विदेशियों की अधीनता से मुक्त करना होगा। साथ ही साथ, अब जिन अत्याचारियों के हाथों में शासन-सत्ता है, उनके और विदेशी विजेताओं के विरुद्ध एक नयी ही राष्ट्रीय-सत्ता की स्थापना करनी होगी। हमें क्रांति जारी रखनी है और वह भी प्रजातंत्रवादी सिद्धांतों के अनुसार। वर्तमान सरकार के हाथों से सत्ता छीन लेना राष्ट्र का कर्त्तव्य है। सभी तुर्क आगे बढ़ें। अब किसी भी व्यक्ति का यह अधिकार न होगा कि अपने नाम से कुछ करे। जो कुछ काम होगा, सबके नाम से होगा और राष्ट्र के नाम से होगा।"

ये थीं रोग-ग्रस्त तुर्की में नवजीवन का संचार करनेवाले वीर नेता अतातुर्क गाजी मुस्तफा कमाल पाशा की स्फूर्तिदायिनी वाणी से निकली हुई चिनगारियाँ।

कुस्तुनतुनिया में बादशाह की सरकार विदेशी आक्रमणकारियों के भीषण आघातों से जब डाँवाडोल हो रही थी, तब कमाल पाशा ने एलान किया था:—

"देश खतरे में पड़ गया है। केंद्रीय सरकार में इतनी शक्ति नहीं कि वह लोगों की रक्षा कर सके। तुर्की की रक्षा करना अब लोगों ही का कर्त्तव्य है। पुलिस या फौज का भरोसा न करो। अपनी ही शक्ति के बूते पर स्वतन्त्रता से विचरण करो। आगे बढ़ो। हमें खुली बगावत करनी होगी। एक बार संघर्ष शुरू हो गया, तो फिर हमें दृढ़ता के साथ प्रण कर लेना चाहिये कि हम अपने कर्त्तव्य से विमुख न होंगे—चाहे जो कुछ हो। निःसन्देह, मुझे 'बागी' का फतवा मिलेगा। यह भी निश्चित बात है कि मुझपर घोर विपदा आ पड़ेगी। मेरे सभी साथी मेरी तकलीफों में भी हिस्सा लेने के लिए अभी से तैयार हो जायें।"

तुर्की में क्रान्ति की बाढ़ सी बह चली। देश के अधिकांश प्रदेशों पर क्रान्तिकारी सैन्यों का अधिकार हो गया। अब यूनानी आक्रमण-

कारियों से देश को मुक्त करना था। कमाल पाशा ने गुप्त रूप से सेना इकट्ठी की। सामने के मोरचे पर स्वयं जाकर खड़े हो गये और आपने नेपोलियन के शब्दों में अपने सैनिकों को हुक्म देते हुए कहा कि:—

"सिपाहियों! भूमध्य-सागर ही तुम्हारा लक्ष्य है। आगे बढ़ो। चलो भूमध्य-सागर की ओर।"

२६ अगस्त सन् १९२२ को यह हुक्म जारी हुआ। इससे सिपाहियों में जिस स्फूर्ति का संचार हुआ, उसकी प्रबलता का परिचय इसी से मिल सकता है कि अगले ही दिन सवेरे यूनानी सिपाही उलटे पांव भाग खड़े हुए। सितम्बर १९२२ तक सारा देश विदेशियों से पूर्ण रूप से आजाद हो गया।

खलीफा की पराधीनता से स्वदेश को मुक्त करने की समस्या भी कुछ कम टेढ़ी न थी। मुस्तफा कमाल ने इस दिशा में सतर्कता से काम लेना आवश्यक समझा। इसलिये राष्ट्रीय धारासभा में उन्होंने यह तजवीज रक्खी कि खिलाफत को सल्तनत से अलग कर दिया जाये। लेकिन, यह सलाह मानी न गई। बहुत सोच-विचार के बाद कमालपाशा ने इसी प्रश्न पर धारासभा के सामने दुबारा भाषण देते हुए कहा कि:—

"राज्य-सत्ता किसी की देन नहीं, बल्कि लड़कर जीती गई है। उसमानिया घराने ने इसी तरह सत्ता जीती थी और अब कौम ने उसे प्राप्त कर लिया है। यदि धारासभा इस बात को मान ले, तो अच्छा होगा। यदि आप लोग इसे स्वीकार न करेंगे, तो भी जो कुछ होना है, वह तो होकर ही रहेगा। लेकिन, इस हालत में कुछ लोगों के सिर धड़ से अलग हो जाएंगे।"

सन् १९२३ के शुरू में कमाल पाशा ने "पीपुल्स पार्टी" के संगठन का सूत्रपात किया। इस पार्टी के घोषणा-पत्र में प्रजातन्त्र की स्थापना करने की बात बहुत ही गोलमोल ढंग से लिखी गई थी;

क्योंकि उचित समय से पहले ही अपनी योजना स्पष्ट रूप से प्रगट करना कमाल पाशा ने हानिकारक समझा। आखिर वह भी समय आया। अक्तूबर १९२३ में तत्कालीन मंत्रिमण्डल ने पद-त्याग कर दिया और उसके स्थान पर दूसरा मंत्रिमण्डल स्थापित करने का कमाल पाशा का अनुरोध माना न गया। २९ अक्तूबर सन् १९२३ को उन्होंने अपने कुछ घनिष्ट मित्रों को दावत दी और उसी अवसर पर कहा कि "हम कल ही प्रजातन्त्र की घोषणा कर देंगे।" हुआ भी ऐसा ही!

तुर्की में हुई इस क्रान्ति की विशेषता यह है कि न केवल विदेशी आक्रमणकारियों, अपितु सुलतान व खलीफा के फौलादी पंजे से भी देश आजाद हुआ और पुराने जमाने के उन रस्मोरिवाजों से भी, जिनसे देश की प्रगति रुकी हुई थी, लोगों को आजाद कर दिया गया। राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक बन्धनों से देश को मुक्त करके उसे सर्वतोमुखी प्रगति की ओर अग्रसर करने वाले क्रान्तिकारी नेता कमाल पाशा को अतातुर्क की उपाधि प्राप्त हुई, तो इसमें आश्चर्य क्या है?

इस क्रान्ति के बाद जिस तुर्की का निर्माण हुआ, वैसे ही नव-भारत का निर्माण करना हमारा सुनिश्चित लक्ष्य होना चाहिये। हमें भी अपने देश को विदेशियों की पराधीनता से मुक्त करके पण्डे-पुरोहितों-पण्डितों की पराधीनता से भी उसको मुक्ति दिलवानी है और यहां की जनता को सामाजिक अन्ध रूढ़ियों, धार्मिक अन्धविश्वासों, वंशपरम्परागत मूढ़ अन्ध-भावनाओं और पोथी-पन्नों के जंजाल से उसे मुक्त करना है। तभी हमारे अभागे देश में पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रभात प्रगट होकर मुकम्मिल आजादी की रोशनी फैल सकेगी और चालीस करोड़ नर-नारी एक मुख से कह सकेंगे:—

ज य हि न्द
इन्कलाब जिन्दाबाद!!
आजाद हिन्द जिन्दाबाद!!!

हमारे क्रान्तिकारी प्रकाशन

१. यूरोप में आजाद हिन्द	२)
२. करो या मरो	१।)
३. टोकियो से इम्फाल	२॥)
४. जयहिन्द	२)
५. लाल किले में	२॥)
६. राजा महेन्द्रप्रताप	१॥)
७. आजाद हिन्द के गीत	॥)
८. नेताजी जियाउद्दीन के रूप में	२)
९. परदा	३)
१०. राष्ट्रवादी दयानन्द	१॥)
११. राष्ट्रपति कृपलानी	१।)
१२. देवली के नजरबन्द	१)
१३. अगस्त क्रान्ति की चिनगारियां	१)
१४. कल्पना कानन	२)

निम्न पुस्तकों के पहिले संस्करण समाप्त हो चुके हैं। इसलिये अभी ये उपलब्ध नहीं हैं:—

१. स्वामी श्रद्धानन्द
२. हमारे राष्ट्रपति
३. आर्य सत्याग्रह
४. लाला देवराज
५. राष्ट्रधर्म
६. श्रीदेव सुमन

कुछ प्रकाशन शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाले हैं। पूरे सूचीपत्र के लिए लिखें।

मारवाड़ी पब्लिकेशन्स, ४० ए, हनुमान रोड, नई दिल्ली।